महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा का मुख पत्र

वर्ष : ६० अंक : ०१

दयानन्दाब्द: १९३

विक्रम संवत्: पौष शुक्ल २०७४

कलि संवत्: ५११८

सृष्टि संवत्: १,९६,०८,५३,११८

सम्पादक

डॉ. दिनेशचन्द्र शर्मा

प्रकाशक-परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर- ३०५००१

दूरभाष: ०१४५-२४६०१६४

मुद्रक-श्री मोहनलाल तँवर

वैदिक यन्त्रालय, अजमेर।

दूरभाष : ०१४५-२४६०८३१

परोपकारी का शुल्क

भारत में

वार्षिक-२०० रु., **द्विवार्षिक**-३९० रु.

त्रिवार्षिक-५८० रु.

आजीवन (१५ वर्ष)-२००० रु.

एक प्रति - १५/- रु.

विदेश में

वार्षिक-५० यू.के. पाउण्ड/८० यू.एस.डॉलर

द्विवार्षिक-९५ पाउण्ड/१५२ डॉलर

त्रिवार्षिक-१४० पाउण्ड/२२५ डॉलर

आजीवन (१५वर्ष)-५००पा./८०० डॉ.

एक प्रति - ३ पाउण्ड

एक प्रति - ४ डॉलर

वैदिक पुस्तकालय : ०१४५-२४६०१२०

ऋषि उद्यान : ०१४५-२६२१२७०

ओ३म्

विद्याविलाससमनसो धृतशीलशिक्षा:,
सत्यव्रता रहितमानमलापहारा:।
संसारदु:खदलनेन सुभूषिता ये,
धन्या नरा विहितकर्म परोपकारा:।।

RNI. No. ३९५९/५९

परोपकारी

जनवरी प्रथम २०१८

अनुक्रम

०१. धरोहर संरक्षण क्यों?	सम्पादकीय	०४
०२. जीवन-यात्रा में सतर्कता अनिवार्य	डॉ. धर्मवीर	०६
०३. पाठकों के विचार एवं प्रतिक्रिया		०९
०४. कुछ तड़प-कुछ झड़प	प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'	१०
०५. मानव सदाचार	पं. उदयवीर शास्त्री	१५
०६. प्राणोपासना-६	तपेन्द्र वेदालङ्कार	१९
०७. शङ्का - समाधान - १६	डॉ. वेदपाल	२३
०८. वैदिक पुस्तकालय के नये संस्करण		२५
०९. क्या संस्कृत पढ़ने से अर्थार्जन....	श्रीशदेव पुजारी	२७
१०. अमर शहीद स्वामी श्रद्धानन्द	वेदारीलाल आर्य	२९
११. महर्षि दयानन्द सरस्वती के जीवन...	ओमप्रकाश गुप्ता	३१
१२. स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी....	राजेन्द्र 'जिज्ञासु'	३५
१३. संस्था-समाचार		३७
१४. प्राचीन भारत में विद्यालय की....	सुनील वेदश्रवा	३८
१५. आर्यजगत् के समाचार		४२

www.paropkarinisabha.com
email : psabhaa@gmail.com

- उपनिषद्, दर्शन, प्रवचन आदि सुनने हेतु बटन दबाएँ -
www.paropkarinisabha.com → Daily Pravachan

लेख में प्रकट किए विचारों के लिए सम्पादक उत्तरदायी नहीं है। किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्यायक्षेत्र अजमेर ही होगा।

धरोहर संरक्षण क्यों?

प्रत्येक राष्ट्र की अपनी धरोहर या विरासत होती है, क्योंकि कालचक्र के अनुसार प्रत्येक समाज अपनी मान्यताओं, व्यवसाय, कला, साहित्य, भाषा और धार्मिक अनुभूति का संवर्द्धन या परिवर्तन निरन्तर करता रहता है। विश्व में भारत प्राचीनतम देश है। महर्षि दयानन्द के अनुसार मानव इतिहास का पहला उद्गम त्रिविष्टप तिब्बत में हुआ, जहाँ से सभ्यता और वहाँ से नि:सृत शाश्वत संस्कृति के तत्त्वों को पूरे विश्व में प्रसारित किया गया। इसलिए आर्यावर्त्त या वर्तमान भारत की सुदीर्घ विरासत है जिसे समय-समय पर भारत के ऋषियों, सन्तों, महापुरुषों, साहित्यकारों, कलाकारों, राजनीतिज्ञों, योद्धाओं और आम जनता ने किसी न किसी रूप में संरक्षित किया है। समयानुसार इस धरोहर में लचीलापन होने के बावजूद यह आज भी अपने मूल स्वरूप और तत्त्वों के साथ उपस्थित है, जो वर्तमान पीढ़ी को भारतीय संस्कृति के नाम से इस पर गर्व करने का आधार देती है और भावी जीवन की आधारशिला का निर्माण करने की भी सामर्थ्य प्रदान करती है।

धरोहर के विभिन्न स्वरूप समाज में दृष्टिगोचर होते हैं। हम आर्यों की धरोहर में वेद वह थाती है जिससे जन-जन जीने की ऊर्जा प्राप्त करता है। अत: मनुष्य के अलावा नदियाँ, वृक्ष, पशु और पक्षी इन सभी के प्रति आदर्श रूप एवं समग्रता, व्यवहार जो मानव के लिए आवश्यक है, उनका संरक्षण अपरिहार्य हो जाता है। इसीलिए जीवन की आचार-पद्धति में यथायोग्य व्यवहार करने का संदेश महर्षि दयानन्द ने दिया है। इसी से पर्यावरण का संरक्षण इतने वर्षों से भारत में होता रहा। पुरानी शैक्षणिक कथाओं में वृक्षों को मानवीय स्वरूप प्रदान कर जीव-जन्तुओं को धार्मिक विश्वासों के साथ जोड़ा गया ताकि समाज में समरसता का भाव उत्पन्न हो सके और वे हमारी जीवन शैली का अपरिहार्य अंग बन सकें।

श्री अरविन्द ने '**भारतीय संस्कृति के आधार**' पुस्तक में भारत की उस धरोहर का विस्तार से वर्णन किया है, जिसकी आधारभूमि महर्षि दयानन्द का वैदिक चिन्तन ही है और जिसमें मानव मात्र के कल्याण की सुव्यवस्थित रूपरेखा प्रस्तुत की गयी है। यही भाव रोम्या रोलां ने प्रस्तुत किया। इसके अतिरिक्त भारत में पल्लवित और पुष्पित विभिन्न विचारधाराएं भारत की धरोहर रही हैं जो सभ्यता और संस्कृति के क्रमिक परिवर्तन को दर्शाती हैं। वैदिक षड्दर्शनों के अतिरिक्त जैन, बौद्ध और चार्वाक जैसे नास्तिक दर्शन भी भारत की भूमि में पुष्पित और पल्लवित हुए।

भारतीय धरोहर में सम्प्रभुता कहीं दृष्टिगोचर नहीं होती। राजनीतिक, धार्मिक और सामाजिक चिन्तकों की कोटियाँ भारतीय संदर्भ में विभाजित नहीं की गई हैं। यहाँ मनु राजनीतिक, धार्मिक, सामाजिक चिन्तक के रूप में हैं तो चाणक्य, कालिदास, बाणभट्ट इत्यादि की रचनाएँ भारतीय धरोहर और परम्परा के समन्वयपूर्ण स्वरूप को प्रस्तुत करती हैं। यही भारत की विशेषता है।

दूसरी ओर ब्रिटिश इतिहासकारों ने भारतीय धरोहर को छिन्न-भिन्न कर विभिन्न वर्गों में बाँटकर इसका विश्लेषण किया, जिसके कारण हमारी सांस्कृतिक, पारिवारिक और राजनीतिक संस्थाएँ विखण्डित हो गईं। फलस्वरूप एक वक्तव्य आने लगा कि हमारा धर्म क्या मात्र संतों का है? वैरागी एकाकीपन से पलायनवाद का जन्म हुआ, इसलिए राष्ट्रीय सरोकारों में मध्यकाल की लगभग 1000 वर्ष की परतन्त्रता ने संपूर्ण परम्परा को एकांगी बना दिया था। मध्यकालीन संतों और भक्ति परम्परा ने यद्यपि सीमित अर्थों में नहीं, परन्तु केवल धर्म के शाश्वत स्वरूप के स्थान पर तात्कालिक मान्यताओं और अन्धविश्वासों को भक्ति और परलोक के नाम पर प्रस्तुत और प्रचारित कर एकांगी किंवा अपूर्ण परम्पराओं को ही पुष्ट किया, जिसके कारण भारतीय जनमानस, जो परतन्त्रता को स्वीकार ही नहीं कर सकता था, उसने बाध्य होकर अपनी परिवार-संस्था, सांस्कृतिक संस्था, कला, साहित्य, भाषा और राजनीतिक संस्थाओं को स्वयं नष्ट होने के लिए छोड़ दिया।

आश्चर्य की बात है कि हम कबीर को कभी क्रान्तिकारी मानते हैं, कभी सुधारक मानते हैं, लेकिन तुलसी को ऐसा नहीं मानते। हम जयदेव और विद्यापति जैसे कवियों को स्वीकार करते हैं, लेकिन मध्यकालीन भास्कर द्वितीय की 'लीलावती' को मान्यता नहीं देते। महर्षि दयानन्द के राजनीतिक, दार्शनिक, और सामाजिक योगदान को स्वीकार नहीं करते, गांधी और नेहरू के चिन्तन को स्वीकार करते हैं। यही खेद का विषय है कि जिन मूल्यों की धरोहर के रूप में भारतीय समाज में निरन्तरता देखी गई, उन्हें 19वीं और 20वीं सदी तक आते-आते दम तोड़ना पड़ा और एक नये स्वरूप का उदय होने लगा।

स्वतन्त्रता के बाद तुष्टीकरण की नीति ने स्वतन्त्र चिन्तन को बल न देकर राजनीतिक रूप से अवैज्ञानिक और अन्धविश्वासी मान्यताओं को संरक्षण दिया एवं उन्हें संपोषित किया, कभी धर्मनिरपेक्षता के नाम पर और कभी अल्पसंख्यकों को संवैधानिक संरक्षण के नाम पर। यह चिन्ता का विषय है कि यदि भारतीय धरोहर संरक्षित, पुष्पित एवं पल्लवित नहीं होगी और अगली पीढ़ी को हस्तान्तरित नहीं होगी तो भारत के सांस्कृतिक मूल्यों का जीवन में किस प्रकार पालन हो सकेगा? यह वही विचार है कि पर्यावरण संरक्षण को पाठ्यक्रम में सम्मिलित करने के सर्वोच्च न्यायालय के आदेश को विद्यालय और महाविद्यालय में पढ़ाने की बाध्यता तो है, लेकिन जैव विविधता के प्रति मानव के अन्त:मन की संवेदना एवं साहचर्य को परिवार संस्था के माध्यम से उद्वेलित करने का कार्य नहीं किया जाएगा।

धरोहर को मात्र परम्परा समझना भी उचित नहीं कहा जा सकता, क्योंकि परम्पराएँ जब तक मूल्यों के साथ समन्वित हैं तभी तक परिवर्तनशील जगत् में विद्यमान रहती हैं। समग्र सृष्टि में मूल्य-आधारित व्यवहार ही धरोहर संरक्षण के रूप में स्वीकार होता है। धरोहरों के विभिन्न भाग हो सकते हैं, जैसे- तात्त्विक चिन्तन, व्यावहारिक जीवन, राष्ट्रीय व्यवहार, सांस्कृतिक रीति-रिवाज, स्थापत्य, संगीत, साहित्य, भाषा इत्यादि। किसी भी कालखण्ड में जो कुछ भी घटित हुआ है वह सब नष्ट करने के लिए नहीं है अपितु उसके श्रेष्ठतम का संरक्षण अपरिहार्य है, ऐतिह्य रूप में इतर का भी, अन्यथा खण्डन या मण्डन दोनों ही दृष्टि से द्वितीय पक्ष को पूर्व पक्ष की आवश्यकता का निर्वहन कैसे हो सकेगा। भारतीय चिन्तन परम्परा में प्रश्नोत्तर शैली, ऋषियों और संतों को स्वीकार्य है। महर्षि दयानन्द ने विभिन्न स्थानों पर पूर्वपक्ष के रूप में जिन प्रश्नों को उठाया है, उत्तर पक्ष में उनका समाधान किया है। इसलिए भले ही धरोहर-संरक्षण में कोई बोली, कोई कलाकृति, कोई इमारत विद्यमान है तो भारतीय शैली में इसके लिए भी स्थान है।

वर्तमान संदर्भ में प्राचीन भारतीय धरोहरों को नष्ट करने की सुनियोजित नीति अंग्रेजों ने प्रारम्भ की थी। यद्यपि अनेक कट्टरतावादी मुस्लिम शासकों ने भारतीय सांस्कृतिक तत्त्वों को नष्ट करने का प्रयास किया, परन्तु वह योजनाबद्ध नहीं था। परन्तु, स्वतन्त्रता के बाद धरोहर के प्रतिमानों को विसंस्कृत करने का अभियान निरन्तर चलता रहा, जिसके कारण भारतीय समाज को सत्य और असत्य, मूल्य और अमूल्य, धर्म और अधर्म का भेद स्पष्ट ही नहीं हो पाया। परिणामत: आधुनिक पीढ़ी अपनी धरोहर को श्रेष्ठता और सम्मान से नहीं देखने का फैशन चलाती है, उसे उपहास की दृष्टि से देखती है। उसे जीवन के लिए सर्वथा अनुपयोगी मानती है, जबकि धरोहर के आधार पर ही भावी भवन का निर्माण किया जाता है, जिसकी आज महती आवश्यकता है। आर्यसमाज एक सजग प्रहरी है इस धरोहर के संरक्षण का और उसके संवर्धन का उसके ऊपर सबसे अधिक दायित्व है।

-**दिनेश**

जैसे पवन सब को सुख देता हुआ सब के रहने का स्थान हो रहा है वैसे ही विद्वान् को होना चाहिये।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ५.४१

अग्नि और जल संसार के सब व्यवहारों के कारण हैं, इस से गृहस्थजन विशेषकर अग्नि और जल के गुणों को जानें और गृहस्थ के सब काम सत्य व्यवहार से करें।

- महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.२४

प्रवचनमाला-१६

जीवन-यात्रा में सतर्कता अनिवार्य

प्रवचनकर्त्ता - डॉ. धर्मवीर

लेखिका - सुयशा आर्य

पिछले प्रवचन का अगला भाग....

युञ्जते मन-हमको अपना मन परमेश्वर में लगाना चाहिए। **युञ्जते धिया**-अपनी बुद्धि परमेश्वर में लगानी चाहिए। **वि होत्रा दधे**-जो आहुति देने वाला है, उपासक है, वह है **विप्रः** और **विप्रस्य बृहतो विपश्चितः**-जो परमेश्वर विपश्चित है, जो परमेश्वर विप्र है, जो परमेश्वर बृहत् है, उसकी **परिष्टुतिः**। परिष्टुति है स्तुति, लेकिन महती स्तुति करनी है। महती अर्थात् बड़ी। मैं आपसे चर्चा कर रहा था कि परमेश्वर की उपासना को हम लोग बड़ा कठिन काम समझते हैं, लेकिन मन्त्र को देखने से ऐसा लगता है कि परमेश्वर की उपासना बड़ा सरल काम है। आपको कुछ भी तो नया नहीं करना। बस आप दिन भर सोचते ही तो रहते हो-कभी अपने खेत-खलिहान के बारे में सोचते हो, कभी अपने दुकान-व्यापार के बारे में सोचते हो, कभी अपने बच्चे-पत्नी के बारे में सोचते हो, कभी अपने हानि-लाभ के बारे में सोचते हो, सोचते तो रहते ही हो। कुछ तो करना नहीं है, इतना सा करना है कि बस सोचने का पात्र बदल देना है। जितनी लगन से, जितनी गहराई से, जितनी निरन्तरता हम अपनी चीज के बारे में सोचते हैं। ईश्वर के बारे में भी बस वैसे ही सोचना है, उतना ही सोचना है और यह सोचना संभव कैसे है? हम दुनिया के सब लोगों के बारे में तो सोचते नहीं हैं, हम अपने ही लोगों के बारे में सोचते हैं, अपने ही प्रिय के बारे में सोचते हैं। जो अपने को लाभ देता है, उसके ही बारे में सोचते हैं। आधार यह है कि जो मेरा है, जो मेरे लिए लाभदायक है, जिससे मेरा संबन्ध है, मैं उसके बारे में सोचता हूँ, दूसरे के बारे में नहीं सोचता। तो अब मुझे सोचना यह है कि मेरे लिये वास्तव में लाभदायक कौन है? मेरा अपना कौन है? और यदि ये बात मैं सोच लूँ तो मेरा एक स्वभाव है, जो मेरे लिए अच्छा है मैं उसको अपने आप स्वीकार कर लेता हूँ। मुझे कोई जोर ही नहीं पड़ता। छोटा-सा बच्चा, जिसे आप बचपन में टॉफी देकर बहकाते हो, वो स्कूल जाने लगता है, बड़ा हो जाता है तो क्या टॉफी से मान जाता है? हमारे एक मित्र हैं और हमारी सभा के सदस्य भी हैं, पं. भगवान सहाय जी। मैं उनकी दुकान पर खड़ा था, एक नौजवान की ओर उन्होंने संकेत किया कि यह अपने पिता से बहुत नाराज है, मैंने पूछा क्यूँ नाराज है? पंडित जी बोले, यह ७० लाख रुपये लेने के बाद भी नाराज है। बोला, जी बँटवारा हुआ, मेरे हिस्से में ७० लाख आए। मैंने कहा-फिर नाराज होने की क्या बात है? बोला, अरे नाराज तो होना ही है, जो सोने की ईंट रखी है, वो तो बाँटी ही नहीं।

जिससे मैं बहुत प्रेम कर रहा था, मुझे पता लगा कि यह मेरे लिए लाभदायक नहीं है तो मेरा प्रेम उससे हट गया। आप ये समझते हो कि दुनिया में प्रेम निश्चित रूप से पति से होगा, पत्नी से होगा, प्रेमी से होगा, प्रेमिका से होगा, दुकान से होगा, बेटे से होगा, बेटी से होगा, मित्र से होगा। नहीं, प्रेम परिस्थिति से होगा, परिस्थिति नहीं होगी तो नहीं होगा। मतलब इनसे प्रेम हो भी सकता है, नहीं भी हो सकता है। तो, यह तो कोई जरूरी नहीं है कि ये पति है इसलिए प्रेम होगा ही होगा, यह पत्नी है इसलिए प्रेम होगा ही, यह बेटा है, इसलिए प्रेम होगा ही। अपने काम का है तो हो जाएगा और काम का नहीं है तो नहीं होगा। तो यह बात भी पक्की है कि प्रेम ऐसा पक्का नहीं है कि आप इसे उखाड़कर दूसरी जगह नहीं लगा सकते। लगाने का कारण आपकी समझ में आना चाहिए, आप जब चाहे तब उखाड़ सकते हो और उखाड़ देते हो। जो बेटा आपको बहुत प्रिय था, आप उसको बेदखल कर देते हो। यह मेरा नहीं, इसकी कोई जिम्मेदारी मेरी नहीं। क्यों भाई? ये तो आपका बेटा था, आप तो बहुत प्रेम करते थे, फिर इसको आपने क्यों छोड़ दिया? अजी क्या बेटा है, कहना ही नहीं मानता, उल्टा चलता है, ऐसा बेटा नहीं चाहिए। जब आपको यह समझ में आने लगेगा कि यह भी काम का नहीं है, तो फिर सबसे ज्यादा काम का है कौन? और जिस दिन यह बात समझ में आ जाएगी कि परमेश्वर काम की चीज है तो

सही, पर आज तक आँखों के सामने ही नहीं आई, फिर आपको बलपूर्वक इधर नहीं आना पड़ेगा बल्कि बड़े सहज भाव से आप इधर आ जायेंगे, बिना परिश्रम के आ जायेंगे। बिना परिश्रम के कैसे आयेंगे? उसका उपाय ही तो स्तुति है। जब आप किसी को पसन्द करने लगते हैं तो कहते क्या हैं-तू बड़ा अच्छा है, मेरा बेटा बड़ा अच्छा है, मेरी पत्नी बड़ी अच्छी है, मेरा पिता बहुत अच्छा है, मेरा साथी बहुत अच्छा है। यह 'अच्छा' बहुत मजेदार शब्द है, बहुत ही प्यारा शब्द है। बस सोचने की बात है, मन में एक भाव आना चाहिए कि यह अच्छा लगता है। यह अच्छा लगना जो है, यही है सूत्र।

दुनिया में सब चीजें अच्छी लगती हैं, लेकिन यह बेचारा भगवान् बिल्कुल भी अच्छा नहीं लगता। नियम ये है कि दुनिया में जब कुछ अच्छा लगता है तो उसको पाना ही होता है, मैं उसके पास ही होता हूँ और जैसे ही वो अच्छा नहीं लगता तो वो मेरे से दूर हो जाता है और यदि आज भगवान् मुझसे दूर है तो इसका मतलब है कि वो मुझे अच्छा नहीं लगता। यह हो नहीं सकता कि अच्छा लगे और दूर रहे। अच्छा लगे तो उसके पास रहने के लिए आदमी तड़पने लगता है। माँ से बच्चे को दूर कर दो तो माँ न सोती है, न जागती है। बाप को पता लग जाए कि बेटा मुसीबत में है, तो उसे कुछ सूझता ही नहीं है। बस एक सूत्र आप पकड़ लीजिए कि भगवान् अच्छा लगे।

कैसे? दूसरे लोग कब अच्छे लगे थे? जब लगा था कि यह 'मेरा' है, जब लगा था कि इससे मुझे लाभ है, जब लगा था कि यह मेरा भला चाहता है, जब लगा था कि यह मेरे लिए बड़ा काम करता है। मुझे सेवक तब अच्छा लगता है, जब सेवक स्वामी का भक्त होता है। मुझे पत्नी तब अच्छी लगती है, जब वो मेरे अनुकूल होती है। मुझे पति तब अच्छा लगता है, जब वो मेरा ध्यान रखता है। यह सब बातें अच्छा लगने का कारण हैं। आप सोचकर देखो कि यह भगवान् भी किसी काम की चीज है भी या नहीं है? नहीं है, तो अच्छा नहीं लगेगा। और कहीं यह काम का निकल आए तो? फिर भी अच्छा लगेगा कि नहीं लगेगा?

एक आदमी की शादी हुई, सवेरे से शाम तक अपनी पत्नी का ही बखान करता रहता है। एक पत्नी अपने पति की ही बड़ाई करती रहती है। हमारे एक प्रोफेसर साथी थे, उनका विवाह हुआ, वो पूरी क्लास में पत्नी-पुराण ही चला देते थे। अब यह झगड़ा कुछ भी तो नहीं है, अच्छा लगने का ही तो झगड़ा है। आपको जो चीज अच्छी लगती है आप उसके ही पीछे पड़े रहते हो। आपको जो दृश्य अच्छा लगता है, उसी को बार-बार याद करते हो। तो यह अच्छा लगने की जो बात है, यह किसी तरह से बदल जाए तो वह ईश्वर भी आपको अच्छा लगेगा। पर वो अच्छा लगेगा तो आप क्या करोगे? जो यहाँ करते हो बिल्कुल वही करोगे। यहाँ व्यक्ति का गुणगान करते हो, वस्तु का गुणगान करते हो, अपने घर का गुणगान करते हो, अपने खेत का करते हो, अपने धन का करते हो, अपनी संतान का करते हो, दिनभर स्तुति ही तो करते हो। जरा सोचकर देखो, आप दिन में कितनी बार इनके बारे में सोचते हो और यह सोचना क्या है-स्तुति। पहले स्तुति दुनिया की करते थे। अब ईश्वर की करने लग जाओ।

आप समझते हो कि उपासना पता नहीं क्या चीज है। मुझे ऐसा लगता है कि उपासना से सरल कोई चीज ही नहीं है और यही ऋषि दयानन्द की सबसे बड़ी कृपा है, दया है, योगदान है। और जो पुरानी उपासनायें हैं वो तो बहुत बोझ हैं। आप कल्पना करके देखो कि एक मन्दिर में जाने के बाद पीछा तो छूटता नहीं है कि सामने दूसरा मन्दिर आ जाता है। वहाँ भी आपको हाथ जोड़ने पड़ते हैं, सिर झुकाना पड़ता है, पैसे चढ़ाने पड़ते हैं, तभी तीसरा आ जाता है। मैं जब कॉलेज जाता था, पैदल आता था। मित्र मिल जाते थे। कहते कि चलो, आओ जी स्कूटर पर बैठो, मोटरसाइकिल पर बैठो, तो बैठ जाता था। एक मित्र से मैंने पूछा, रास्ते के जितने भी भगवान् हैं, सबको ही सिर झुकाता रहता है, यह तो बड़ा ही मुश्किल काम है। इतने लोगों को सिर झुकाओ, इतने लोगों को नमस्ते करो, इतने लोगों की सुनो। दयानन्द कितना भला आदमी था, बोले- इतनी मुसीबत क्यों करो। एक का ही कर लिया करो, एक बार ही कर लिया करो। अब मन्दिर में जाते हो तो जितनी मूर्तियाँ है, उन सबको हाथ जोड़ते हो। जितनी मूर्तियाँ हैं, सबको चढ़ावा चढ़ाते हो और दिन में जितने मन्दिरो के सामने से गुजरोगे, उतनों को हाथ जोड़ोगे। जेब में पैसे होंगे

तो दस-पाँच चढ़ाओगे। ये तो बहुत ही जटिल काम है, पता नहीं लोग कैसे करते हैं और कैसे हम लोग भी पहले करते रहे होंगे। ऋषि दयानन्द की यह बात सुनकर लगा कि देखो कितना आसान काम है, न मन्दिर में जाने की जरूरत है, न चढ़ावा चढ़ाने की जरूरत है, न सत्रह जगह हाथ-सिर पटकने की जरूरत है। कुछ भी तो नहीं करना है, और तो और इतना भी नहीं करना है कि हाथ-पैर चलाना पड़े। बस बैठ जाओ हाथ-पैर मोड़कर और कर लो आँख बन्द। अब बताओ आपका क्या खर्च होने वाला है। अब वहाँ बैठकर करोगे क्या? बस जो करोगे वो उपासना है और कुछ भी उपासना नहीं है और संसार में उपासना ऐसी नहीं है कि आप कभी-कभी करो। कभी-कभी तो कोई उपासना होती नहीं है। उपासना तो पूरे समय में होती है।

अच्छा एक कल्पना करके बताओ या अनुभव किया हुआ देखकर बताओ कि यह संसार हमारे काम का भी है कि बेकार है? क्योंकि ऐसा लगता है कि संसार में रहने वाला तो भगवान् से जुड़ नहीं पाता। हो सकता है कि संसार को छोड़ना ही पड़ेगा इस भगवान् को पाने के लिए। क्या यह विचार ठीक है? लोग तो कहते हैं ठीक है, पर मैं कहता हूँ, यह गलत है। यह बिल्कुल ही सरासर गलत है। यदि ऐसा होता तो भगवान् इस संसार को बनाता ही नहीं। ये तो वैसा ही हुआ जैसे खुदा ने शैतान को बना दिया। तो खुदा के शैतान बनाने में और भगवान् के दुनिया बनाने में अन्तर क्या रहा? दोनों ही तो बहकाते हैं। आप यही तो कहते हो कि दुनिया बहकाती है। एक भजन है ना 'इशारों से मुझको बुलाती है दुनिया'। आप ऐसा मानो तो यह भगवान् की कृति बेकार हो जाएगी, यह भगवान् की रचना ही व्यर्थ हो जाएगी। क्योंकि दुनिया में भगवान् बनाए और कोई चीज गलत बने, क्या ऐसा सम्भव है? भगवान् कोई चीज बनाए और वो अनुचित हो अपवित्र हो, खराब हो, क्या ऐसा संभव है? फिर संसार बनाकर उसने क्या अपराध किया है? ये संसार भी आपकी उपासना के लिए है। आप कहेंगे कि संसार से तो अभी हटा रहे थे, अभी फिर कहते हैं संसार उपासना के लिए है। हाँ, है। क्या आप ऐसा समझते हो कि संसार उपासना का विरोधी है? और यदि संसार उपासना का विरोधी है तो उपासना का समय तो आपका सवेरे दो घंटे का है और दुनिया का ८ घन्टे का समय उपासना के विरोध का है तो उपासना का प्रयोजन कैसे सिद्ध होने वाला है? सवेरे १० किमी. आप भगवान् की तरफ चले एक घंटा, दो घंटा चले और दिनभर आठ घंटे में भगवान् से उल्टे चले, तब आप कितने दिन में मुक्ति में पहुँचोगे? रोज सवेरे दो घंटे भगवान् से मिलोगे और दस घंटे भगवान् के उल्टे जाओगे, चलेगा? एक बच्चा जब पढ़ने बैठता है, तो वह पहली से एम.ए. तक चलता रहता है। आप यह तो नहीं कह सकते कि वो सो रहा है, खेल रहा है तो पढ़ नहीं रहा है। वो जिस दिन विद्यालय में प्रविष्ट हुआ था, उस दिन से पढ़ रहा है और आप सदा यही बोलते हो कि मेरा बच्चा पढ़ रहा है। अरे कुछ भी कर रहा है तो पढ़ ही रहा है। तो मित्रो, आप कुछ भी कर रहे हो तो कर तो वही रहे हो, जो करना है। कुछ भी करो, जो दुनिया के काम आप करते हो, करो, लेकिन उपास्य वे नहीं होंगे। उपास्य ईश्वर होगा। मतलब परिवार से प्रेम करना है, पर उपास्य समझ कर नहीं। उपास्य तो ईश्वर है। ईश्वर ने आपको-हमको मिलकर कुछ करने के लिए भेजा है। ईश्वर ने कहा है इसलिए करेंगे। ईश्वर का काम है इसलिए करेंगे। इसमें दुनिया से क्या विरोध है? दुनिया के हर काम को करते हुए करेंगे। आप जब यात्रा में निकलते हो तो सवेरे तो आप खाने-बनाने, ठहरने आदि दिनचर्या में रहते हो, फिर निकलते हो, गाड़ी उठाते हो, बड़ी तेजी से चलते हो, फिर रुक जाते हो। फिर ज्यादा दूर नहीं चलते हो, थोड़ा रुककर चलते हो। कहीं धीरे चलते हो, कहीं तेजी से चलते हो, कहीं बैठ जाते हो, कहीं सो जाते हो, फिर कहीं जाग जाते हो, लेकिन यह सारे के सारे प्रयत्न क्या हैं, यात्रा से बाहर हैं कि यात्रा के भीतर हैं। आप रेल में सो रहे हो तो यात्रा कर रहे हो कि नहीं कर रहे हो? तो आप सो रहे हो तब भी यात्रा कर रहे हो, खा रहे हो तब भी यात्रा कर रहे हो, आप बात कर रहे हो तब भी यात्रा कर रहे हो। जब इस दुनिया में सब कुछ करते हुए यात्रा ही करनी है तो वास्तविक यात्रा कौन-सी है? यात्रा चल तो रही है, अन्तर इतना सा है कि यदि आप यात्रा का स्टेशन याद रखोगे, तब ठीक दिशा में जाओगे, ठीक समय पर पहुँचोगे और यदि

उल्टा हो जाएगा कि उतरना था मुझे अम्बाला में, गाड़ी पहुँचती रात के दो बजे, सोचा तो बहुत कि उठूँगा, पर पता नहीं अम्बाला कब निकल गया, जाकर पहुँच गया जालन्धर तो मैंने पूछा अम्बाला आया? तो वह हँसा, अम्बाला! मैंने कहा फिर क्या? बोला जालन्धर है। मैंने कहा, कोई बात नहीं यहाँ उतर जाते हैं। तो हम दुनिया में जो कर रहे हैं, यात्रा ही तो कर रहे हैं और यात्रा वही कर रहे हैं जो भगवान् करा रहा है, अन्तर इतना है कि दिमाग से स्टेशन गायब है और यात्रा चल रही है। जन्म-जन्मान्तर चल रहे हैं। है तो यात्रा। यदि आपको यह याद रहे कि कहाँ पहुँचना है, कब पहुँचना है, कैसे पहुँचना है तो आपकी यात्रा बिल्कुल ठीक है और ठीक समय पर पहुँच जाओगे, नहीं तो मेरे जैसा आदमी भटकता रहता है। कभी तो पहुँचेगा। जब कभी ध्यान आएगा तो पहुँच जायेगा। नहीं ध्यान आएगा तो घूमता रहेगा। गाड़ियाँ तो चलती ही रहेंगी, कभी इस शरीर में कभी उस शरीर में, कभी इस गाँव में कभी उस गाँव में। यात्रा तो जारी है, यात्री बनाकर तो आपको भगवान् ने संसार में भेज दिया, अब प्रश्न यह है कि बता तो उसने यह भी दिया है कि आपका स्टेशन कौन-सा है, मर्जी आपकी है याद रखो या मत रखो।

पाठकों के विचार

मैं उप मुख्य कार्मिक अधिकारी पश्चिम रेल्वे प्रधान चर्च गेट से सेवानिवृत्त होकर आदरणीय डॉ. धर्मवीर जी से अप्रैल २०१४ में ऋषि उद्यान स्थित यज्ञशाला में मिला। उनसे पूर्व परिचय होने के कारण उन्होंने मुझे परोपकारिणी सभा कार्यालय केसरगंज में आमन्त्रित किया। मैं मेरी धर्मपत्नि सहित दूसरे दिन परोपकारिणी कार्यालय पहुँचा। डॉ. धर्मवीर जी ने मेरा परिचय उनकी पत्नि श्रीमती ज्योत्स्ना जी व परोपकारिणी सभा के कार्यालय में कार्यरत सभी महानुभावों से करवाया।

जब मैंने परोपकारिणी सभा में अपनी सेवाऐं देने का विचार प्रकट किया तो आदरणीय डॉक्टर भाई जी ने बड़ी विनम्र शैली में समझाया-भाई जी आपके सेवानिवृत्त पद के अनुसार आपके योग्य उपयुक्त पद तो नहीं है, पर आप अपनी सेवाएं ऋषि उद्यान, भोजनशाला, गौशाला, परोपकारिणी कार्यालय में दे सकते हैं। मैंने उनके उक्त कथनों से अत्यन्त प्रभावित हो अपनी धर्मपत्नि के साथ ऋषि उद्यान स्थित भोजनशाला, गौशाला, अनुसन्धान भवन का निरीक्षण किया।

इसके पश्चात् मैं परोपकारिणी का आजीवन सदस्य बना, गौशाला में चारा दान, ऋषि मेला, योग साधना शिविर आदि आदि गतिविधियों में भाग ले रहा हूँ।

ऐसे विनम्र, कर्मठ, विद्वान् डॉ. धर्मवीर जी को मेरा शत् शत् नमन

- सूरजमल मीणा, सुभाष नगर, अजमेर

पाठकों की प्रतिक्रिया

मूर्तिपूजा का मतलब है-उल्टी गंगा बहाना

उपरोक्त शीर्षक लेख मूर्तिपूजा निषेध के यथोचित तर्क एवं वस्तु स्थिति से अवगत कराने में परोपकारी का नवम्बर द्वितीय अंक मील का पत्थर बन गया है। समस्त बिखरे तन्तुओं को एकत्र करके लेखक ने जो उल्लेख किया है वह झकझोरने वाला है।

पाखण्ड, अन्धविश्वास की परत दर परत उधेड़ने वाला यह विचार प्रत्येक मानव शृंखला तक पहुँचना चाहिये। इसकी उपस्थिति हर थोथी दलील को कुंठित कर ऊंघते विवेक को झटका लगा सकती है। कोई एक बार पढ़कर तो देखे।

- सत्यदेव प्रसाद आर्य, नेमदारगंज, बिहार

कुछ तड़प–कुछ झड़प

प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

विदेशों में वेद प्रचार के इतिहास के प्रेरक प्रसंग– दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के कार्यालय से चलभाष पर इस सेवक को याद करके पूछा गया कि विदेशों में वेद-प्रचार करने वाले पुराने विद्वानों, धर्मवीरों के कुछ नाम बतायें। मुझे दिल्ली सभा ने एक करणीय कार्य के लिए याद किया–यह मेरा सौभाग्य। मैं एक साथ कई कार्य लेकर उन पर कार्यरत रहता हूँ। चलभाष पर ऐसे महत्त्वपूर्ण विषय पर विस्तार से आवश्यक जानकारी नहीं दी जा सकती, परन्तु आजकल हर कोई गम्भीर विषय पर बात छेड़कर सब कुछ चलभाष पर ही जानना चाहता है।

मैंने उन्हें बताया कि आप और हम आमने-सामने हों तो हर पहलू पर प्रकाश डाल सकता हूँ। कुछ नाम बताये भी, यथा–दिल्ली के पूजनीय स्वामी विज्ञानानन्द जी ने मॉरिशस में जो कार्य किया उसकी दिल्ली में कौन चर्चा करता है? विदेशों में धर्मप्रचार पर दो अत्युत्तम पुस्तकों के नाम भी बताये। मेहता जैमिनी जी लिखित 'विदेशों में वेद प्रचार का इतिहास' अपने विषय की अत्युत्तम पुस्तक है। पूज्य स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज की वेद-प्रचारार्थ विदेश यात्राओं की पुस्तक भी एक अनूठी प्रेरणाप्रद पुस्तक है।

आज विदेशों में चक्कर लगाने वाले तो बहुत हैं, परन्तु डॉ. चिरञ्जीव जी, भाई परमानन्द जी, पं. चमूपति जी, पं. अयोध्या प्रसाद जी, स्वामी सत्यप्रकाश जी–जिनकी चर्चा होनी चाहिये, होती नहीं।

दिल्ली सभा का आदेश सुनकर 'तड़प-झड़प' में इस विषय पर कुछ अंकों में लिखने का तत्काल निश्चय कर लिया। पूज्य स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज का ऋण चुकाने का दिल्ली सभा ने एक अवसर दे दिया, इस प्रलोभन का संवरण नहीं किया जा सकता।

वे दो दीवाने मिशनरी– पाठक यह उपशीर्षक पढ़कर चौंक जायेंगे। विदेशों में ऋषि मिशन का सन् १८९३ में डंका बजाने वाले ये दो दीवाने कौन थे? जब अमेरिका के शिकागो सम्मेलन में भाग लेने स्वामी विवेकानन्द जी गये थे, तब पं. लेखराम के दो दीवाने श्री जेन्दाराम तथा श्री सिद्धूराम भी जैसे-तैसे मजदूरी करके अमेरिका पहुँच गये। ये दोनों मात्र मैट्रिक पास थे। ये पं. गुरुदत्त जी, श्री शहीद जी, सरशार जी, मान्य शरर जी की धरती मुज़फ़्फ़रगढ़ (पश्चिमी पंजाब) के अनुभवहीन आर्यवीर थे। जलपोत के इंजन में कोयला डालने की मज़दूरी करते हुये निःशुल्क अमेरिका पहुँच गये।

पं. गुरुदत्त जी का साहित्य लेते गये। उन दिनों अमेरिका में पुस्तकें पढ़कर सुनाने की प्रथा थी। ये सिरफिरे आर्यवीर वहाँ पं. गुरुदत्त जी के उपनिषद् पढ़-पढ़कर सुनाने लगे। सारे अमेरिका में इन्होंने पं. गुरुदत्त की धूम मचा दी। उनके उपनिषदों की भारी माँग होने लगी। पंजाब प्रतिनिधि सभा ने इनका शिकागो संस्करण छपवाकर वितरण करने के लिये अमेरिका भेजा। उस संस्करण की एक दुर्लभ प्रति मैंने खोज निकाली। अब परोपकारिणी सभा को भेंट कर दी है। आर्य सज्जनो! इन आर्य धर्मवीरों की कृपा से एक अमेरिकन ने पं. गुरुदत्त जी के उपनिषदों का संस्करण निकाला। इसे कहते हैं प्रचार। अमरिका में ऋषि मिशन का सबसे पहले डंका बजाने वाले यही दो धर्मवीर थे। सिद्धूराम तो लगभग एक वर्ष रहकर स्वदेश लौट आये। जेन्दाराम जी ने तो साढ़े तीन वर्ष वहाँ प्रचार किया। मैं इनके बारे में लम्बे समय तक खोज करता रहा। जेन्दाराम जी वहाँ से बिजली से चिकित्सा करना सीख आये। अब डॉ. जेन्दाराम कहलाने लगे थे। जो कुछ मेहता जैमिनी जी और पं. शान्तिप्रकाश जी के मुख से सुना था उसका सार लिख दिया है। मैं लेखों व पुस्तकों में भी इनकी चर्चा करता चला आ रहा हूँ। शेष अगले अंक में–

लेखराम के लाल तुम्हारी जय हो जय हो।
भूमण्डल पर धर्म वेद की सदा विजय हो।।
लेकर नाम तुम्हारा हम मस्ती से फूलें।
सिद्ध सिद्धू और जेन्दा को हम कभी न भूलें।।

ऋषि दयानन्द की रंगत– पूज्य **पं. गंगाप्रसाद जी उपाध्याय** ने महर्षि दयानन्द के संसार पर प्रभाव और वैदिक धर्म की रंगत पर एक मार्मिक बात लिखी है। भूमि

का गुरुत्वाकर्षण का सिद्धान्त हमारी सब गतिविधियों में ओतप्रोत है, परन्तु दिखाई किसी को नहीं देता। ऐसे ही ऋषि के उपकार को कोई माने या न माने, वैदिक सिद्धान्तों को खुलकर स्वीकार करने की घोषणा कोई करे या न करे, वैदिक धर्म की रंगत सर्वत्र अपना चमत्कार दिखा रही है। राहुल गाँधी कई मन्दिरों में गये। प्रयोजन भले ही मन्दिरों में आस्था का परिचय देना न होकर राजनीतिक था, परन्तु वे हिन्दू धर्मगुरु, पण्डे और पुजारी जो आर्यजाति के प्यारों और दुलारों को जातिवाद व जन्म के कारण मन्दिरों में पैर न धरने देते थे, कहीं-कहीं मन्दिरों के पास तक न फटकने देते और केरल के एक बड़े मन्दिर में महिलाओं को घुसने न देते थे, वे राहुल गाँधी को गद्‌गद्‌ होकर तिलक लगा रहे थे। किसी ने न पूछा कि यह कौन से ब्राह्मण गोत्र का सपूत है। हमें राहुल के मन्दिर जाने पर आश्चर्य तो है, आपत्ति नहीं। ब्राह्मण, पुजारी, धर्मगुरु और राहुल सब किसी न किसी प्रकार ऋषि के रंग में कुछ तो रंगे दिखे।

किसी भी हिन्दू संस्था ने कुछ वर्ष पूर्व सत्यार्थप्रकाश पर मौलवियों द्वारा दिल्ली में अभियोग चलाने पर चुप्पी न तोड़ी। जिस डॉक्टर श्यामाप्रसाद मुखर्जी को देश-विभाजन से पूर्व सत्यार्थप्रकाश की रक्षा के लिये चलाये गये आन्दोलन का नेतृत्व करने का सौभाग्य और गौरव प्राप्त रहा, उस देशरत्न डॉ. श्यामाप्रसाद के नाम की माला फेरने वाले एक भी हिन्दू नेता ने इस केस में मौन न तोड़ा। राहुल महाशय के हिन्दू होने के विरोध में एक भी हिन्दू धर्माचार्य और लीडर खुलकर नहीं बोला। अपवाद हो सकता है। अपवाद तो नियम को सिद्ध ही करता है।

हमें गर्व भी है, हर्ष भी- कहीं भी, किसी भी अंश में कोई वैदिक धर्म के रंग में रंगा जावे तो हमें गौरव भी होता है और हर्ष भी होता है। मौलाना सनाउल्ला ने हक प्रकाश में खुलकर लिखा है कि अल्लाह किसी के दुष्कर्म क्षमा करे, किसी को बहिश्त में भेजे या दोजख़ में-यह उसकी इच्छा। किसी को इस पर प्रश्न करने का क्या अधिकार कि अमुक को या मुझको दु:ख क्यों दिया जाता है? महाकवि अकबर जी इलाहाबादी इस युग के प्रतिष्ठित मुसलमान और महाकवि हुये हैं। वह कई आर्य विद्वानों के मित्र, प्रेमी और प्रशंसक थे। आप ऋषि दयानन्द के रंग में रंगे गये। रंग भी ऐसा गहरा कि सबको दिखे। आर्यसमाज से जुड़े किसी व्यक्ति का मेरे लेख से दिल दुखे तो मैं क्या कर सकता हूँ। महाकवि अकबर के फ़ारसी भाषा में लिखे गये एक मार्मिक पद्य का आनन्द रसपान करें-

ईं फितनः कि बरपा शुद्ध व ईं शोर कि बरखास्त।
इल्ज़ाम ब गर्दूं मनेह अज़ मास्त कि बरमास्त।।

यह पद्य कुल्लियाते अकबर इलाहाबादी में भी मिलता है। इसमें कवि कहता है-यह झगड़ा शरारत जो हो रही है और जो शोर हाहाकार मचा हुआ है इसका दोष आसमाँ पर, भगवान् पर मत थोप। अरे यह हमारे ही पाप कर्मों के कारण है और हमीं इसका फल चख रहे हैं। कर्म का फल टल नहीं सकता। दोषी हम हैं तो हमीं इसे भोगेंगे। मौलाना सनाउल्ला होते तो क्या उत्तर देते? यह ऋषि की रंगत है। कौन इन्कार कर सकता है? 'अज़ मास्त कि बर मास्त' अर्थात् यह विपदा जो हम पर आई है हमारी ही लाई हुई है। यह फारसी-उर्दू की बहुत प्रचारित लोकोक्ति बन चुकी है।

ऋषि कहाँ-कहाँ पहुँच गया?- हम 'फीरोज़ुललुग़ात' उर्दू के प्रसिद्ध शब्दकोश नवीनतम संस्करण के पृष्ठ ८१ पर इसे देखकर दंग रह गये और गद्‌गद्‌ भी हो गये। वाह! किसी मौलाना ने इस्लाम में कुफ्र का शोर नहीं मचायाा। कहाँ-कहाँ ऋषि पहुँच गया है! हमीं आलस के कारण मरे पड़े हैं। हमें पं. लेखराम, पं. रामचन्द्र देहलवी की दिग्विजय का पता ही नहीं चला।

राणा प्रताप गन्नौरी जी का उत्तम लेख- 'आर्यजगत्' के १९ नवम्बर २०१७ के अंक में साहित्याचार्य डॉ. राणा गन्नौरी जी का माननीय शरर जी पर एक उत्तम और पठनीय लेख छपा। छोटे अक्षरों में छपे लेख व पुस्तकें पढ़ने से बचता हूँ, परन्तु इस लेख का एक-एक शब्द सुरुचि से पढ़ा। अच्छा हो राणा जी, पं. लोकनाथ जी आदि मुलतान क्षेत्र के सब पुराने विद्वानों पर भी अपनी लेखनी उठायें। इस लेख में आदणीय राणा गन्नौरी जी एक नररत्न को तो भूल ही गये। बड़ों की भूलें भी बड़ी ही होती हैं। यह भूल अनजाने में हुई लगती है। आप पूज्य पं. त्रिलोकचन्द्र जी शास्त्री को भी भूल गये। वह भी मुलतान क्षेत्र की ही देन थे और 'आर्यजगत्' के लम्बे समय तक सम्पादक रहे। सम्भव

है आपको यह पता ही न हो। पूज्य पण्डित जी को कादियाँ का ही जानते-मानते हैं।

पं. लेखराम के दीवानेपन में आपने उनके मिशन के लिये कादियाँ में डेरा डालकर जन्म क्षेत्र का प्यार उस पर वार दिया। मान्य शरर जी को रोहतक दुर्गा भवन में माधवाचार्य अग्नि कुण्ड में फिंकवाकर मरवाने के प्रयास में विफल रहा। श्री मामचन्द तथा श्री जितेन्द्र दो आर्यवीरों ने शूरता दिखाकर शरर जी को बचा लिया। इस घटना को देना ही चाहिये था। यह भी भूल रही।

पूज्य पं. त्रिलोकचन्द्र जी तीन भाषाओं के कवि और सात भाषाओं के विद्वान् हमारे इतिहास पुरुष थे। वह अपना पूरा परिवार लेकर आर्यसमाज के झण्डे को लेकर जेल में गये। जो बच्चा गोद में था, वह भी माँ के साथ जेल गया। डॉ. ऋषि जी तब अबोध थे। हमारा प्यारा दयानन्द (ज्येष्ठ पुत्र) तो गुरदासपुर जेल में था। मेरी माता भी पण्डित जी के ही जत्थे में जेल गईं थीं। हैदराबाद सत्याग्रह के पहले सत्याग्रही हमारे पूज्य पण्डित जी ही थे। वहाँ श्रद्धेय स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी ने जेल जाने की आज्ञा न दी। वह प्रचार विभाग (आर्य पत्रों के सम्पादक) के प्रमुख रहे। लेखनी सम्राट् पूजनीय उपाध्याय जी को संस्कृत व्याकरण पढ़ाने का गौरव आप ही को प्राप्त रहा। 'आर्यजगत्' में तो पण्डित जी की कोई चर्चा ही नहीं करता लेकिन हम उन्हें कभी भूल नहीं सकते। देश विभाजन से पूर्व आर्य पत्रों में उनके लेखों के साथ उनका नाम पं. त्रिलोकचन्द्र शास्त्री कादियानी छपा करता था सो जन्म-क्षेत्र से रहा-सहा नाता भी टूट गया।

कविवर सुरूर का तराना- डॉ. अलिफ़ नाज़मजी ने सुरूर जी पर हिन्दी में प्रकाशित पहली पुस्तक के लिये हमें उनका महर्षि दयानन्द जी पर रचा गया लम्बा व मधुर तराना उपलब्ध करवाया। उसकी कुछ चुनी हुई पंक्तियाँ यहाँ भेंट की जाती हैं-

वहदत[१] की हल्की-हल्की किरणें गिराने वाले।
ओ आफ़्ताब[२] बनकर जलवा दिखाने वाले।।
खींचे हुए .फ़साहत[३] तेगे ज़बान आई।
ओ वेद की सदायें[४], हमको सुनाने वाले।।
ख़ूने जिगर से सींचा भारत के फिर चमन को।
वेदिज्म (Vedism) के जहाँ में ओ गुल खिलाने वाले।।
नहरें हुईं अरब में गंगा की जिससे जारी।
वहदत[५] की ओ ज़मीं पर चश्मा बहाने वाले।।
फैली जहाँ में तुझसे बूये वफ़ाये वहदत।
तौहीद[६] की चमन में कलियाँ खिलाने वाले।।
हर बुत का बुतकदे में पिन्दार[७] तूने तोड़ा।
सदके तिरे बुतों की हस्ती मिटाने वाले।।
ढाढ़स बँधाई उनको[८] पाकर उदास तूने।
दुखियारियों के ग़म में आँसू बहाने वाले।।
ओ देशभक्त तूने खोले अनाथशाले।
सीने से बेकसों[९] को उठकर लगाने वाले।।
भारत पे जान अपनी तूने निसार कर दी।
एहसाँ के तेरे सदके दुनिया से जाने वाले।।
तू बाँसुरी बजाए हम तेरे गीत गायें।
ओ धर्म की सुरीली बंसी बजाने वाले।।

टिप्पणी

१. एकेश्वरवाद, २. सूर्य, ३. धाराप्रवाह ज्ञान, ४. ऋचायें, ५. एकेश्वरवाद, ६. एकेश्वरवाद, ७. जड़ मूर्तियों का अभिमान तोड़ डाला, ८. विधवाओं को सान्त्वना दी ९. असहाय अनाथ।

यह स्मरण रहे कि लगभग एक शताब्दी तक सब मत-पन्थों ने सुरूर जी के इस तराने से प्रभावित व प्रेरित होकर इसी रंगत में अपने-अपने गीत, रचे जो बहुत लोकप्रिय हुए।

महर्षि दयानन्द की एक विलक्षणता मुखरित करो- किसी प्रेमी ने ऋषि जीवन विषयक कुछ प्रश्न पूछे तो प्रसंगवश उसे बताया कि भारतवर्ष के विद्वान् बहुत पुराने समय से परस्पर शास्त्रार्थ करते चले आ रहे थे। शास्त्रार्थ एक का एक ही से होता था। कभी परकीय मतों से टकराने की (परकीय मतों के आने पर) किसी में हिम्मत ही नहीं हुई। महर्षि दयानन्द ऐसे प्रथम विद्वान् विचारक थे जो अकेले विरोधियों के जमघट से टकराने का साहस दिखाते रहे। काशी शास्त्रार्थ में वे अकेले थे। विरोधी विद्वान् सैंकड़ों थे। शास्त्रार्थ में दर्जनों प्रतिपक्षी ऊपर बैठे थे। बोलने वाले भी बारी-बारी से कई बोलते रहे।

चाँदापुर में कई देसी-विदेशी पादरी थे। मौलवी भी

एक नहीं, कई पधारे। अजमेर में पादरियों से शास्त्रार्थ हुआ। वहाँ भी प्रतिपक्षी कई थे। देशभर में सर्वत्र यही कुछ होता रहा। कोलकाता में सैंकड़ों प्रतिपक्षियों ने ऋषि के विरुद्ध व्यवस्था के लिये सभा की। ऋषि को अपना पक्ष रखने के लिए आमन्त्रित करने की भी हिम्मत न हुई।

हमें महर्षि की विद्वत्ता व महानता की विलक्षणता को उदाहरण दे दे कर मुखरित करते रहना चाहिये। यह बेजोड़ पहलु है ऋषि जी के जीवन का।

गुरु ब्रह्मानन्द स्वामी पर पहली पुस्तक- पुण्डरी का गुरु ब्रह्मानन्द आश्रम आर्यसमाज में अकेला ऐसा आश्रम है जहाँ प्रतिदिन व साप्ताहिक सत्संग में अच्छी उपस्थिति होती है। शान्तिपाठ से पहले कोई सत्संगी उठने का नाम नहीं लेता। स्वामी बलेश्वरानन्द जी महाराज ने दूरदर्शिता दिखाते हुये अपने गुरु श्री स्वामी ब्रह्मानन्द जी की प्रेरणाप्रद जीवनी छपवा दी है। लेखक हमारे प्रिय आर्यवीर श्री राजपाल हैं। आदि से अन्त तक पढ़े बिना पुस्तक छोड़ने को मन नहीं करता। महाराज ब्रह्मानन्द जी श्री स्वामी श्रद्धानन्द के शिष्य व परमभक्त थे। स्वामी बलेश्वरानन्द जी ने वेद तथा यज्ञ के सच्चे भक्त ब्रह्मानन्द जी की शिष्य परम्परा को आर्यसमाज से जोड़ने का यश कमाया है। आर्यसमाजियों का भी कर्त्तव्य है कि इस पुस्तक का प्रसार करें और आश्रम की यात्रा करते रहा करें। इस आश्रम को भूलना भूल ही नहीं, आत्मघाती भूल होगी। आश्रम के साथ अनेक युवक जुड़े हुये हैं। वे ऋषि मेले पर भी आते हैं।

राजनेताओं के बिगड़े बोल- भारत के लिये यह बहुत दुर्भाग्यपूर्ण बात है कि राजनीतिक दलों के कई नेता आपत्तिजनक भाषा का प्रयोग करके वातावरण दूषित करते हैं। बिगड़े बोल कोई गौरव की बात नहीं है। सत्ता पक्ष तथा विरोधी पक्ष दोनों में ऐसे कई नेता हैं। ओसामा बिन लादेन, जहाँगीर, औरंगजेब का नाम तो ऐसे लिया जाता है जैसे कि वे परोपकारी, पुण्यात्मा और जननायक इनके पूज्य हैं। जिन्होंने कभी सम्राट अशोक, परम पराक्रमी महाराज स्कन्दगुप्त का नाम लेते हुये उनके नाम के साथ कभी आदरसूचक शब्द श्री व जी नहीं लगाया, वे अफ़ज़ल गुरु को सजल नयनों से याद करते हैं। ओसामा के लिये मरते हैं। डॉ. राजेन्द्र प्रसाद, बाबू पुरुषोत्तम दास टण्डन, डॉ. श्यामाप्रसाद मुखर्जी तो अभद्र शब्दों का प्रयोग नहीं किया करते थे।

एक महात्मा ने राम मन्दिर के निर्माण के लिये सभी पक्षों से बात चलाई, तो एक महात्मा ने कहा, यह कौन होते हैं? कहाँ से आ गये? हम ही बात करने का अधिकार रखते हैं। अपना बनाना जो नहीं जानते, वे क्या देशोद्धार करेंगे?

राहुल को ब्राह्मण बताने व बनाने का नाटक भी बड़ा दु:खद और निराशाजनक रहा। धर्मशास्त्रों में जो वेद पढ़े और पढ़ावे, वह ब्राह्मण है। राहुल जी ने कहाँ धर्मशास्त्रों का अध्ययन कर लिया? तिलक लगवाने से, कभी गीता पढ़ लेने से या दो चार अवसरों पर यज्ञोपवीत पहन लेने से कोई ब्राह्मण होता है तो फिर तो ऐसे लाखों ब्राह्मण राजनेता मिलने चाहिये। राहुल जन्म से न सही **कर्म से ब्राह्मण बन जावे तो हम आर्यसमाजी उसका स्वागत, सम्मान करेंगे।** हम जन्म से किसी को न ब्राह्मण मानें और न ही क्षत्रिय। जन्म की जाति-पाँति मिटनी ही चाहिये।

कहने से नहीं करके दिखाओ- आये दिन लव जिहाद की चर्चा छेड़कर कुछ जोशीले स्वयंभू लीडर कुछ घोषणा कर देते हैं कि विधर्मी लड़कियों के... शुद्धिकरण, घर वापसी भाषण झाड़ने से नहीं होगा। यह तो चुपचाप, प्रीतिपूर्वक, सोत्साह धर्म-प्रचार से ही होगी। बजरंगदल के ऐसे भाषणकर्त्ता, घोषणा गुरु अभी तक एक भी विधर्मी को पं. देवप्रकाश, पं. मेधातिथि, श्री हरजसराय और पं. शान्तिस्वरूप नहीं बना सके। जाति रक्षा व धर्मप्रचार के लिए घोषणा गुरु नहीं चाहिये। इस कार्य हेतु पं. रामचन्द्र देहलवी, पं. भोजदत्त तथा पं. शान्तिप्रकाश बनाने वाली फैक्ट्रियाँ चाहिये। बातें करना बड़ा सरल है। जातिसूचक शब्दों का नाम के साथ प्रयोग कानून के विरुद्ध घोषित किया जाये। चौधरी चरणसिंह का उदाहरण राजनेताओं का आदर्श हो।

कुछ इधर की, कुछ उधर की- 'कुछ तड़प-कुछ झड़प' अभी पूरा नहीं किया था कि राजनीति में कांग्रेस के 'भोले बाबा' श्री मणिशंकर ने प्रधानमन्त्री मोदी जी को 'नीच' कहकर देशवासियों का दिल दुखा दिया। बहुत अच्छी हिन्दी बोलते रहते हैं, परन्तु 'हिन्दी नहीं आती' की

रट लगाते हुये 'नीच' की नई-नई व्याख्यायें सुनाने में लगे हैं। उर्दू फ़ारसी के भारी बोझिल शब्द भी बोलेने के अभ्यासी हैं। 'माज़रत' फ़ारसी शब्द का फ़ारसी जानने वाले इस लेखक ने कभी प्रयोग नहीं किया। श्री अय्यर बड़े सहज भाव से 'माज़रत' भी बोलते दिखाई दिये। नाक चढ़ाकर घृणामूर्ति भोले अय्यर प्रधानमन्त्री को 'नीच' आदि शब्दों ...से कोसते रहे। मैं आर्यसमाजी हूँ सो भोले-भाले अय्यर की जन्माभिमानी सोच ने मेरा कलेजा चीरकर रख दिया। गुरु अर्जुनदेव जी को को 'कुफ्र की दुकान' लिखने वाला क्रूर जहाँगीर तो अय्यर जी के लिये पूजनीय 'जी' है और देश को सामरिक दृष्टि से ऊँचाइयों पर ले जाने वाला प्रधानमन्त्री 'नीच' है। अपनों से इतना वैर! यह देशघाती नीति है।

एक पार्टी के नेता ने गाँधीजी की अहिंसा का राग छेड़कर राजनीति पर प्रवचन सुनाया। वह प्रवचनकर्त्ता यह भूल गया कि गाँधी जी ने ही अब्दुल रशीद क्रूर हत्यारे को भावभरित हृदय से 'भाई' बताकर महिमामण्डित किया था। रामप्रसाद बिस्मिल, ठाकुर रोशन सिंह, वीर भक्त सिंह को तो हिंसक मानकर भाई बताने और कहने की हिम्मत न हुई। वीर सावरकर से तपस्वी बलिदानी को तो गाँधी जी ने भूलकर भी भाई न कहा, न लिखा। भारतीय राजनीति में कटुता की परम्परा बड़ों की ऐसी-ऐसी बड़ी भूलों से ही आरम्भ हुई।

''पत्थर भी कभी सुनते हैं फ़रियाद किसी की?''- कभी लाहौर से निकलने वाले एक सनातन-धर्मी पत्र के सम्पादकीय का शीर्षक किसी उर्दू कवि के एक प्रसिद्ध पद्य की यह पंक्ति थी। गुजरात के इस निर्वाचन में कांग्रेस प्रवक्ताओं के हाथ मोदी जी के मुख से निकला 'पत्थर' शब्द क्या लगा, जैसे भक्ति की गंगा में डुबकियाँ लगाते हुये ये महादेव आदि अनेक मूर्तियों को भगवान् बताकर उनके अपमान पर अश्रुपात करने लगे। हम भी जानते हैं कि वोटपंथी नेताओं की कृपा से देश में मूर्तिपूजा की अंधी आंधी चल रही है। न जाने महात्मा कबीर, दादू, बाबा नानक और गुरु विरजानन्द, ऋषि दयानन्द के लिये ये लोग क्या कहेंगे। 'जो पत्थर पूजे रब मिले तो हम पूजें पहाड़' यह सन्त वचन देश में किसने नहीं सुन रखा। सर्वव्यापक प्रभु की उपासना करने वालों ने पाषाण-पूजा के खण्डन का अभियान छेड़कर फिर से अंधविश्वासों की धज्जियाँ उड़ा दो।

'काजल की कोठरी विश्व यह बचकर रहो कलङ्क से'- आज प्रातःकाल के समय सिरसा के बन्दी बाबा तथा उसकी सेविका-शिष्या हनीप्रीत के विस्तृत समाचार दैनिक भास्कर में पढ़कर मैं हिल गया। लगभग ५८ वर्ष पूर्व रचे गये बहिन सुशीला आर्या के एक गीत की यह पंक्ति याद आ गई 'काजल की कोठरी विश्व यह बचकर रहो कलङ्क से'। लोगों को ईश्वर-दर्शन करवाने वाले, मोक्ष दिलाने की दुहाई देने वाले, योग सिखाने वाले, ईश्वर से मिलाने की पक्की गारण्टी देने वाले कई बाबों, धर्मगुरुओं और आचार्यों को अपने दुष्कर्मों के कारण जेल में सड़ना पड़ रहा है। कारण सबकी अपकीर्ति का एक ही है-'कामान्धता'। धन सम्पदा तो इन बहुचर्चित बाबों ने अपार बटोर ली, परन्तु इनके दुष्कर्मों से जनता में क्या सन्देश गया? चौधरी देवीलाल ने कभी एक मार्मिक कटु सत्य कहा था, **''पहले लोग राज-पाठ, भोग-विलास पर लात मारकर साधु सन्त बना करते थे। अब साधु, महात्मा, सिद्ध, साधक व योगी बनकर धन, वैभव और राजसत्ता प्राप्त करने के लिये पापड़ बेलते हैं।''**

भोग से योग की ओर जाना तो तपस्या है, उत्थान है, परन्तु योग, उपासना तथा भक्ति से भोग-विलास की ओर जाने से तो इतिहास क्या कहेगा-

ख़ुदा के बन्दों को देख करके
ख़ुदा से मुनकिर हुई है दुनिया
कि जिस ख़ुदा के हैं ऐसे बन्दे
वो कोई अच्छा ख़ुदा नहीं है

हम बाल्यकाल से ही आर्यसमाज में यह पद्य सुनते आये हैं। योग, मुक्ति, मोक्ष के नाम पर साबरमती, दिल्ली, कर्नाटक, सिरसा, हिसार, रोहतक, जोधपुर तक योग की थोक व परचून की दुकानों के समाचार पढ़ सुन कर सावधान होने की आवश्यकता है। ऋषि-जीवन हमारे लिये आदर्श है। यम-नियमों को गौण बनाकर जो इन थोथेश्वरों और भोगेश्वरों के पीछे लगेंगे, उनकी दुर्गति तो होगी सो होगी, धर्म के प्रति जन साधारण में भी अनास्था बढ़ेगी।

मानव सदाचार

आचार्य उदयवीर शास्त्री

समाज व राष्ट्र के अभ्युदय के लिये जिन बातों की आवश्यकता होती है, उनमें सदाचार का ऊँचा स्थान है। राष्ट्र की सामाजिक स्थिति को सुदृढ़, सुसंपन्न, शान्तिपूर्ण एवं सहानुभूतियुक्त बनाये रखने के लिये सदाचार एक महान् साधन है। इसकी शीतल छाया में राष्ट्र पारस्परिक कलह से सदा बचा रहकर सुख-समृद्धि का निर्बाध उपभोग करता है। सदाचारहीन राष्ट्र भयावह भौतिक शक्तियों के रहते भी पतन की ओर अग्रसर हो जाते हैं और देखते-देखते विनाश के गर्त्त में जा पड़ते हैं। शत्रुओं को प्रतिक्षण विभीषिका उत्पन्न करने वाली वे भौतिक शक्तियाँ उस अवस्था में प्रतिरोध के लिये निर्वीर्य हो जाती हैं अथवा अपने राष्ट्र को ही ध्वस्त कर डालती हैं। इतिहास ऐसी घटनाओं से भरा पड़ा है। ऐहिक ऐश्वर्य-मदमत्त मानव सदाचार की महत्ता को झाँक नहीं पाता और विवेक की आँख खुलने पर पश्चात्ताप का आलिंगन करने के बजाय तब और कुछ बाकी नहीं रह जाता। समाज-रक्षा की भावना से सदाचार की उपेक्षा को एक पाप ही समझना चाहिये।

लेख के शीर्षक में 'मानव' पद से हमारा अभिप्राय मनुष्य न होकर 'मनु-सम्बन्धी' है। इसलिये इस विषय में मनु ने जो कहा है, उसी के कुछ अंश पर इस लेख में विचार किया जा रहा है।

सदाचार क्या है- सर्वप्रथम यह जानना आवश्यक है कि कौन से आचरण को सदाचार कहा जाना चाहिए। वैसे इस पद का अर्थ है-श्रेष्ठ आचार और श्रेष्ठ पुरुषों का आचार, लेकिन यह कहने से सदाचार की परिभाषा नहीं होती, दोनों अर्थों में बराबर आगे सन्देह बना रहता है कि कौन-सा आचरण श्रेष्ठ है और कौन-सा निम्न अथवा अवाञ्छनीय? इसकी परख कर लेना आसान काम नहीं है। यदि दूसरे अर्थ के अनुसार इसे स्पष्ट करने का यत्न किया जाय और श्रेष्ठ पुरुषों के आचरण को सदाचार बताया जाय, तो फिर भी सन्देह उसी तरह बना रहता है, किस पुरुष अथवा किस तरह के पुरुष को श्रेष्ठ माना जाय और किसको निम्न अथवा नीच, यह पहचानना कठिन है। कारण यह है कि आचरण की अथवा आचरण करने वाले पुरुष की श्रेष्ठता व अश्रेष्ठता की सीमा या कसौटी हमारे पास कोई नहीं है, जिससे हम आचरण या पुरुष के खरे-खोटेपन को पहचान सकें।

एक प्रकार का आचरण जो किसी समाज में अथवा किसी एक प्रदेश के समाज में बुरा, नीच कर्म, असत् समझा जाता है, वही दूसरे समाज अथवा दूसरे प्रदेश के उसी प्रकार के या उसी कोटि के समाज में अच्छा एवं अनुकरणीय समझा जाता है। इसे स्पष्ट करने के लिए एक-आध उदाहरण प्रस्तुत करता हूँ।

गंगा-यमुना के इस दोआब में और उससे लगे हुए पूरब तथा पश्चिम के प्रदेश में कतिपय जातियों का यह एक साधारण आचरण है कि इनमें 'अट्टे-बट्टे' की शादी हो जाती हैं। इसका अभिप्राय यह है कि जो व्यक्ति किसी लड़की को ब्याहकर लाता है, उसे अपने घर से एक लड़की (बहन या भतीजी आदि) अपनी पत्नी के घरवालों के किसी व्यक्ति के साथ ब्याहनी होती है, जिसका विवाह पत्नी के घर वाले करना चाहें। यह 'अदले-बदले' की शादी है। यदि किसी के घर में लड़की न हो, तो उसका विवाह होना कठिन हो जाता है या उसके लिये भारी रकम देनी पड़ती है। विवाह सम्बन्धी यह आचरण यहाँ की कतिपय जातियों में देखा जाता है और ब्राह्मण, क्षत्रिय आदि जातियों में इस आचरण को अति निन्दनीय समझा जाता है।

इसके विपरीत राजस्थान में सर्वोच्च जातियों में ऐसे विवाह होना एक साधारण आचरण है। दो व्यक्तियों का एक-दूसरे की बहन के साथ विवाह हो जाता है, वे दोनों व्यक्ति परस्पर एक-दूसरे के साले भी हैं और बहनोई भी, इस आचरण को वहाँ निन्दनीय न समझा जाकर वाञ्छनीय माना जाता है, जबकि कई प्रदेश में यह सर्वथा निन्दास्पद

है, कदाचित् इस प्रकार की घटना का होना संभव नहीं।

एक और उदाहरण लीजिये, दक्षिण प्रान्त में ममेरे-फुफेरे भाई-बहनों में विवाह सम्बन्ध हो जाता है और वहाँ के समाज में यह एक साधारण आचरण है, इसे बुरा नहीं समझा जाता, वहाँ यह 'सदाचार' है, पर उत्तर भारत के इन प्रदेशों में इस प्रकार के आचरण की कोई कल्पना भी नहीं कर सकता, यहाँ ऐसा सम्बन्ध दुराचार या असदाचार की कोटि में समझा जायेगा। ये आचरण एक ही संस्कृति को मानने वाले समाज में विद्यमान हैं। विभिन्न संस्कृति तथा विभिन्न देशों में आचरणों में सत् और असत् के विवेक की गणना करना ही कठिन होगा। जो आचरण एक जगह सत् या श्रेष्ठ समझा जाता है, वही दूसरे देश या समाज में असत् व अवाञ्छनीय माना जाता है। ऐसी स्थिति में कौन-से आचरण सत् हैं, इसकी परख करना अति कठिन है, प्रत्येक समाज अपने आचरण को 'सत्' और अन्य को 'असत्' बताता है।

यह कहा नहीं जा सकता कि समाज-व्यवस्था के लिये धर्मशास्त्र की रचना करते समय मनु के सामने यह समस्या थी या नहीं? पर वर्त्तमान मनुस्मृति में सदाचार की परिभाषा को एक प्रदेश-विशेष के आचरण में सीमित किया गया है। द्वितीय अध्याय के १७-१८ श्लोक इस प्रकार हैं-

सरस्वतीदृषद्वत्योर्देवनद्योर्यदन्तरम्।
तं देवनिर्मितं देशं ब्रह्मावर्त्तं प्रचक्षते।।
तस्मिन् देशे य आचारः पारम्पर्यक्रमागतः।
वर्णानां सान्तरालानां स सदाचार उच्यते।।

सरस्वती और दृषद्वती इन दो देवनदियों के बीच का प्रदेश, जिसको देवों ने बसाया है-ब्रह्मावर्त कहा जाता है। उस देश में ब्राह्मण आदि मुख्य वर्णों तथा अन्तरालवर्णों अर्थात् संकरवर्णों का पररम्परा से बराबर चलता आया जो आचार है, वह 'सदाचार' कहाता है।

इन श्लोकों के लेखक ने अपने समय में ब्रह्मावर्त के नये प्रचलित आचार को 'सदाचार' नहीं बताया है, प्रत्युत वहाँ रहने वाले समाज में प्राचीन परम्परा से क्रमपूर्वक चले आ रहे आचार को ही 'सदाचार' माना है। इस वर्णन से एक विचारक के सम्मुख कई प्रकार की समस्याएँ आती हैं। पहली बात यह स्पष्ट होती है कि इन श्लोकों का लेखक अपने समय में प्रचलित ब्रह्मावर्त-निवासियों के आचार को सदाचार नहीं मानता, उसमें अनेक प्रकार की न्यूनताओं का उसे अनुभव हुआ होगा। तब दूसरी समस्या यह सामने आती है कि वह परम्परागत आचरण कौन-से रहे होंगे, जिनको सदाचार का नाम दिया गया। फिर इन श्लोकों के लेखक के काल में ब्रह्मावर्त्त निवासियों के आचार की यह व्यवस्था थी, तो आज-कल की स्थिति का अनुमान सरलता से लगाया जा सकता है। फिर यह भी जानना आवश्यक है कि वह ब्रह्मावर्त देश है कौन-सा?

ब्रह्मावर्त के विषय में विद्वानों के विभिन्न विचार हैं। देशों की सीमा अदलती-बदलती रहती हैं, पर यहाँ सरस्वती और दृषद्वती नदियों का स्पष्ट निर्देश किया गया है, इनको 'देवनदी' लिखा है। कदाचित् ये नदियाँ देवों के देश से निकलकर आती थीं। ब्रह्मावर्त्त भी 'देवनिर्मित' बताया है, देवजन इसमें बसे थे, 'हरिजन' नहीं। सम्भवतः यही कारण इस विशेषण के देने का रहा होगा। इससे प्रतीत होता है कि उस काल में ब्रह्मावर्त-निवासियों का आचरण अवश्य श्रेष्ठ रहा होगा, जिसको सदाचार मानना न्याय था। इन देवनदियों में 'सरस्वती' नाम की वह नदी पहचानी गई है, जो उत्तर प्रदेश के पश्चिमोत्तरवर्ती पर्वतीय प्रदेश से उद्भूत होकर हिमाचल के पूर्वी भाग में बहती हुई वर्तमान अम्बाला जिले में प्रवेश करती थी तथा कुरुक्षेत्र, पहेवा होती हुई पश्चिम दिशा की ओर बह जाती थी। यह नदी अब सहस्रों वर्ष पूर्व से नष्ट हो चुकी है पर अनेक स्थानों पर इसके चिह्न अभी तक पाए जाते हैं और वर्षा ऋतु में कुछ भागों में जलप्रवाह भी रहता है।

दृषद्वती की पहचान अभी अन्धेरे में है। प्राचीन भारतीय साहित्य के आधार पर हमारी यह धारणा है कि उस काल में गंगा नदी का ही अपर नाम दृषद्वती था। यह पहाड़ से बाहर आकर थोड़ी पश्चिम को झुकती हुई पृथूदक (वर्तमान-पहेवा) में सरस्वती के साथ मिल जाती थी। उस समय यह सरस्वती की सहायक नदियों में थी। इसी की तरह यमुना भी, जो गंगा-सरस्वती संगम से पहले ही कहीं सरस्वती में आ मिलती थी। गंगा नदी को भी पुराण साहित्य

में पश्चिमवाहिनी लिखा है। गंगा का दूसरा नाम दृषद्वती है, इसकी जानकारी महाभारत लिखे जाने के समय तक लोगों को थी। उन लेखों के आधार पर यदि इन नदी-विषयक अनुमानों को ठीक समझा जाता है, तो 'ब्रह्मावर्त्त' देश की जानकारी के विषय में अच्छा प्रकाश पड़ सकता है। इस प्रदेश का परम्परागत आचार ही 'सदाचार' माना गया होगा। नदियों की स्थिति के इस वर्णन से इन श्लोकों के लिखे जाने के समय का भी कुछ अन्दाज लगाया जा सकता है। अब देखना चाहिए कि ब्रह्मावर्त-निवासियों का आचार वह क्या रहा होगा, जिसको मनु ने 'सदाचार' माना।

वर्णाश्रम-धर्म-सदाचार- मानव-धर्मशास्त्र का प्रारम्भिक विषयोपक्रम का अंश और अन्य एतत्सम्बन्धी विवरण देखकर यह भावना पुष्ट होती है कि ब्रह्मावर्त-निवासियों के परम्परागत आचार के रूप में वर्णाश्रम-धर्मों को सदाचार माना है। केवल जानने की दृष्टि से वर्णाश्रम-धर्म किसी से छिपे नहीं हैं, पर विधिपूर्वक और आस्था के साथ उनके आचरण की स्थिति यदि सचमुच किसी समाज में रही होगी तो उसके ऐहिक अभ्युदय, सुख-शान्ति और समृद्धि का सानी मिलना कठिन है। वर्णाश्रम-धर्म क्या हैं, जिनके आचरण को मनु ने सदाचार बताया? इसका विवरण मनु ने दिया है- ब्रह्मचर्य का विशिष्ट आयु तक निष्ठा के साथ पालन, सच्चे शास्त्रों का अध्ययन, सन्तानोत्पत्ति के लिए गृहस्थ-आश्रम में प्रवेश, उस अवस्था में वर्णों के अनुसार अध्ययन-अध्यापन, राष्ट्र की रक्षा और शासन का न्यायपूर्वक संचालन, कृषि-व्यापार आदि की उन्नति तथा शारीरिक श्रम द्वारा जीवन-निर्वाह के साथ राष्ट्र के अभ्युदय में सहयोग, अनन्तर इस प्रकार के राष्ट्रोपयोगी कार्यों के अनुष्ठान, आयुमान के अनुसार शारीरिक अथवा मानसिक शिथिलता आने पर विशेष रूप से अध्यात्म की ओर तथा अवसर व सुविधा मिलने पर सर्वसाधारण के लिए सन्मार्ग-निर्देशन की ओर प्रवृत्ति रखना, यज्ञ एवं जप-उपासना आदि का अनुष्ठान-ये सब धर्म और इस प्रकार के अन्य धर्मों को मनु ने वर्णाश्रम-धर्मों के रूप में विभाजित कर, ब्रह्मावर्त्त-निवासियों के आचरण में परम्परा से आते हुए इन अनुष्ठानों को सदाचार माना है।

कहा जा सकता है कि आज यूरोप, अमेरिका आदि देशों में उक्त सदाचार के अभाव में भी सुख-समृद्धि का आपूर देखा जाता है, तब ऐहिक सुख, शान्ति के लिए इन सब बातों को ढकोसला ही समझा जाना चाहिए।

इस कथन के विषय में हमें आँख खोलकर देखना आवश्यक है। पाश्चात्य देशों में चाहे ब्रह्मचर्य आदि का नाम लेकर उद्‌घोषणा नहीं की जाती, पर वहाँ के समाज का इस विषय में आचरण क्या है, यह देखना अपेक्षित है। उस समाज में निश्चित आयु से पूर्व विवाह नहीं हो सकता, पूर्ण युवावस्था प्राप्त होने पर ही यह होता है। बालक-बालिकाओं का आयु का यह भाग विद्या-प्राप्ति और शारीरिक शक्ति संचय के लिए राजकीय प्रबन्ध के अन्तर्गत व्यय होता है। इस प्रकार की बाल-संस्थाओं के संचालकों की ओर से बालकों की सब प्रकार की उन्नति का पूर्ण ध्यान रखा जाता है। आगे गृहस्थ होकर ये युवक अपनी सुविधा व योग्यता के अनुसार प्रत्येक दिशा में कार्यों के निर्वाह के लिए अपनी अनुकरणीय क्षमता का योगदान करते हैं। वहाँ के शासन, कृषि, व्यापार, श्रम आदि सब कार्य इसके प्रमाण हैं। 'सदाचार' कहने की बात नहीं, इसकी सत्ता और महत्ता करने में है। इस विषय में हमें अपने समाज की शिथिलता स्पष्ट रूप में दिखती है। हम कहते अधिक हैं, करते नहीं।

इसमें सन्देह नहीं कि भारतीय समाज धर्मभीरु है, आध्यात्मिक भावनाओं से आप्लावित है। पाश्चात्य देशों का समाज अधिक संख्या में इन भावनाओं से दूर हट गया है, यही कारण है कि वहाँ ऐहिक समृद्धि के आपूर में भी शान्ति का अभाव है। कूटनीतिकता, प्रवञ्चना, संघर्ष आदि का साम्राज्य है। यह स्थिति कभी शान्ति को नहीं आने देती। फलत: वर्णाश्रम-धर्मों का आचरण ही सच्चा सदाचार है। केवल 'धर्म' के नाम से हमें चौंकना नहीं चाहिए। धर्म कोई 'हौआ' नहीं है, मानव-समाज के लिए 'मानव-सदाचरण', समृद्धि एवं सुख शान्ति का मूल साधन है, पर वह केवल 'सत्कथन' व 'सत् वचन' ही न हो, 'सदाचार' हो।

परोपकारी के सुधी पाठकों के लिए आवश्यक सूचना

परोपकारी शुल्क भेजते समय नये या पुराने ग्राहक के उल्लेख के साथ-साथ ग्राहक संख्या अवश्य लिखें, अन्यथा शुल्क जमा करने में कठिनाई आती है। फलस्वरूप पाठकों के पास पत्रिका नहीं पहुँच पाती है। ऐसे ही अपना नाम हटवाते व जुड़वाते समय दूरभाष संख्या सहित अपना पूरा विवरण लिखकर भेजें। ई.एम.ओ. के द्वारा शुल्क भेजने वाले ग्राहक भी सन्देश के साथ अपनी ग्राहक संख्या सहित पूरा विवरण भेजें। **परोपकारी पत्रिका कार्यालय से निरन्तर भेजी जाती है, फिर भी जिन लोगों के पास पत्रिका का कोई अंक प्राप्त ना हुआ हो तो कृपया पत्र या दूरभाष द्वारा हमें सूचित करें, ताकि हम वह अंक पुनः भेज सकें, साथ ही अपने डाकघर में इसकी जाँच आदि भी करें।**

धनराशि भेजने हेतु सूचना

परोपकारिणी सभा महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा स्थापित सभा है एवं उनके कार्यों को आगे बढ़ाने के लिय कृत-संकल्प है। सभा द्वारा ऋषि के स्वप्नानुरूप गुरुकुल, संन्यास एवं वानप्रस्थाश्रम, ध्यान शिविर, वैदिक साहित्य का प्रकाशन, देश में प्रचार, परोपकारी पत्रिका के माध्यम से जन-जागरण, भव्य अतिथिशाला, भोजनशाला आदि अनेक प्रकल्पों का संचालन हो रहा है। ये सभी कार्य आर्यजनों के सात्विक दान से ही होते हैं। अतः दानी महानुभावों से निवेदन है कि वेद, ईश्वर, दयानन्द के इस कार्य में अपना सहयोग अवश्य प्रदान करें।

चैक, ड्राफ्ट, धनादेश (मनीआर्डर) द्वारा राशि भेजने वाले उन पर **'परोपकारिणी सभा'** अवश्य लिख दें। दानी महानुभाव ऑनलाइन भी राशि जमा करवा सकते हैं। भारतीय स्टेट बैंक में एक सहस्र तक की राशि जमा कराने वाले **२५ रु. बैंक सेवा शुल्क के रूप में अतिरिक्त** जमा करवाने की कृपा करें। कृपया, राशि निम्नांकित बैंकों में ऑनलाइन भिजवाकर, जमा कराई गई स्लिप के साथ उद्देश्य लिखकर सभा कार्यालय को सूचित करवाने का कष्ट करें।

खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर (PAROPKARINI SABHA AJMER)

१. बैंक बचत खाता (Savings) संख्या-091104000057530 बैंक का नाम-आई.डी.बी.आई. बैंक, पावर हाउस के सामने, जयपुर रोड, अजमेर।
IFSC - IBKL0000091

२. बैंक बचत खाता (Savings) संख्या - 10158172715 बैंक का नाम - भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।
IFSC - SBIN0007959

जैसे वेद के वेत्ता विद्वान् लोग वेदानुकूल मार्ग से परमेश्वर को जानकर उत्तम ज्ञान से उसका सेवन करते हैं, वैसे ही जगदीश्वर सब को उपासनीय अर्थात् सेवन करने के योग्य है, वैसे ज्ञान के विना ईश्वर की उपासना कभी नहीं हो सकती क्योंकि विज्ञान ही उसकी अवधि है।

- महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.४१

वैचारिक क्रान्ति के लिए सत्यार्थ प्रकाश पढ़ें।

प्राणोपासना – ६

तपेन्द्र

तप श्रद्धे ये ह्युपवसन्त्यरण्ये
शान्ता विद्वांसो भैक्षचर्य्यां चरन्तः।
सूर्यद्वारेण ते विरजाः प्रयान्ति,
यत्राऽमृतः स पुरुषो ह्यव्ययात्मा।।

मुण्डक १.२.११

अर्थ करते हुए महर्षि दयानन्द जी महाराज सत्यार्थप्रकाश के पञ्चम समुल्लास में लिखते हैं, ''जो शान्त, विद्वान् लोग वन में तप, धर्म्मानुष्ठान और सत्य की श्रद्धा करके भिक्षाचरण करते हुए जंगल में बसते हैं, जहाँ नाश-रहित पूर्ण पुरुष लाभ-हानि रहित परमात्मा है, वहाँ वे निर्मल होकर प्राण द्वार से उस परमात्मा को प्राप्त होके आनन्दित हो जाते हैं।'' महर्षि ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका के उपासना विषय में इसी श्लोक की व्याख्या करते हुए 'अरण्य' का अर्थ 'शुद्ध हृदय रूपी वन' करते हैं। महर्षि अनेक स्थानों पर प्राणायाम से प्राण की स्थिरता का उल्लेख करते हैं। उन्होंने उपासना विषय में ही लिखा है, ''इसी प्रकार बार-बार अभ्यास करने से प्राण उपासक के वश में हो जाता है और प्राण के स्थिर होने से मन, मन के स्थिर होने से आत्मा भी स्थिर हो जाता है।'' इससे स्पष्ट है कि परमेश्वर के सत्य राज्य में प्रवेश करने का द्वार प्राण है। इस प्रकार प्राणायाम की सिद्धि उपासना का महत्त्वपूर्ण अंग है।

प्राणोपासना-५ में इंगित किया गया था कि उदान प्राण स्थिर होने पर आत्म-दर्शन होता है। प्राण मन का बन्धन अधिष्ठान है। प्राणायाम से अशुद्धि का नाश और ज्ञान का प्रकाश होता जाता है। प्राणायाम से मन व इन्द्रियों के दोष क्षीण होकर निर्मल हो जाते हैं। प्राणायाम की क्रियाओं का अभ्यास करने से पूर्व कुछ महत्त्वपूर्ण तथ्यों को जानने के क्रम में आसन के बाद **अन्नमयं हि सोम्य मन...** आदि के आधार पर राजसिक, तामसिक भोजन का त्याग कर शरीर शुद्धि करने तथा शरीर शुद्धि से मन की शुद्धि करने के बारे में विचार किया गया था। तीसरा बिन्दु ब्रह्मचर्य है जिस पर विचार होना चाहिये। हम प्राणोपासना में शारीरिक प्राण-क्रियाओं पर विचार नहीं कर रहे अपितु प्राणों में उपासना का विषय विचारित है, अतः ब्रह्मचर्य की विशेष महत्ता भी है तथा ब्रह्मचर्य पालन आवश्यक भी है।

ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ तथा संन्यास आश्रमस्थ जन उपासना कर सकते हैं तथा प्रथम आश्रम से ही आश्रम अनुकूल ईश्वर उपासना किया जाना सिद्धान्त सम्मत है, अतः प्रत्येक आश्रमस्थ जन के लिए उपासना आवश्यक है, उसकी सिद्धि के लिए प्राणायाम आवश्यक है तथा प्राणायाम के लिए ब्रह्मचर्य पालन आवश्यक है। ब्रह्मचर्य आश्रम में तो ब्रह्मचारी रहने का विधान है ही। महर्षि ने सत्यार्थप्रकाश के चतुर्थ समुल्लास में ग्रहाश्रम प्रवेश की योग्यताओं में एक योग्यता 'अलुप्त ब्रह्मचर्य' का उल्लेख किया है। गृहस्थ के लिए लिखा है, ''**ऋतुकालभिगामीस्यात् स्वदारनिरतः सदा**'' जो अपनी ही स्त्री से प्रसन्न और ऋतुगामी होता है, वह गृहस्थ भी ब्रह्मचारी के सदृश है। तृतीय समुल्लास में महर्षि कनिष्ठ ब्रह्मचर्य का लक्षण लिखते हैं, ''इसको अवश्य है कि २४ वर्ष पर्यन्त जितेन्द्रिय ब्रह्मचारी रहकर वेदादि विद्या और सुशिक्षा का ग्रहण करें और विवाह करके भी लम्पटता न करे तो उसके शरीर में प्राण बलवान होकर सब शुभ गुणों के वास कराने वाले होते हैं।'' वानप्रस्थी के लिए महर्षि मनु के श्लोक '**अप्रयत्नः सुखार्थेषु ब्रह्मचारी धराशयः**' का अर्थ करते हुए लिखते हैं-'शरीर सुख के लिए अति प्रयत्न न करे, किन्तु ब्रह्मचारी रहे अर्थात् अपनी स्त्री साथ हो तथापि उससे विषय-चेष्टा कुछ न करे...।' संन्यासी के लिए ब्राह्मण ग्रन्थ के वचन '**यदहरेव विरजेतदहरेव प्रव्रजेद्वनाद्वा गृहाद्वा ब्रह्मचर्यादेव प्रव्रजेत्**' 'तृतीय पक्ष यह है कि जो पूर्ण विद्वान्, जितेन्द्रिय, विषय-भोग की कामना से रहित, परोपकार करने की इच्छा से युक्त पुरुष हो, वह ब्रह्मचर्याश्रम से ही संन्यास लेवे।' इस प्रकार ब्रह्मचर्यपूर्वक जितेन्द्रियता तथा विषयों में अनासक्ति होना संन्यास के लिए आवश्यक है।

महर्षि दयानन्द चरित् अनुसार ''वे (महर्षि) कहते थे कि बिना ब्रह्मचर्य का पालन किये, बिना वीर्य रक्षा किये ईश्वर प्राप्ति तो दूर रही, मनुष्य की बुद्धि और ज्ञान भी परिष्कृत और उज्ज्वल नहीं हो सकते।'' महर्षि उपासना विषय में यमों की व्याख्या करते हुए लिखते हैं, ''चौथा (ब्रह्मचर्य) अर्थात् विद्या पढ़ने के लिए बाल्यावस्था से लेकर सर्वथा जितेन्द्रिय होना और पच्चीसवें वर्ष से लेके अड़तालीस वर्ष पर्यन्त विवाह करना, परस्त्री, वेश्या आदि का त्यागना, सदा ऋतुगामी होना, विद्या को ठीक-ठीक पढ़ के सदा पढ़ाते रहना और उपस्थ इन्द्रिय का संयम करना।'' भूमिका में ही (त्र्यायुषं जमदग्ने) इत्यादि उपदेश से यह भी जाना जाता है कि मनुष्य ब्रह्मचर्यादि उत्तम नियमों से त्रिगुण-चतुर्गुण आयु कर सकता है अर्थात् ४०० चार सौ वर्ष तक भी सुखपूर्वक जी सकता है। वर्णाश्रम विषय में '**ब्रह्मचर्येण देवा मृत्युमपाघ्नत**' (अथर्ववेद) की व्याख्या करते हुए महर्षि लिखते हैं,'' ''ब्रह्मचर्य और धर्मानुष्ठान से ही विद्वान् लोग जन्म-मरण को जीत के मोक्ष सुख को प्राप्त होते हैं।'' सत्यार्थ प्रकाश के तृतीय समुल्लास में महर्षि यहाँ तक विधान करते हैं कि स्त्रियों की पाठशाला में पाँच वर्ष का लड़का और लड़कों की पाठशाला पाँच वर्ष की लड़की भी न जाने पावे। महर्षि को हम आर्य, आप्त मानते हैं, अतः उनके द्वारा कही गयी बातें हमारी समझ में न आवें, यह तो हो सकता है, क्योंकि हम ऋषि नहीं हैं, परन्तु उनकी बातें व्यावहारिक न हों, उचित न हों, यह नहीं हो सकता, क्योंकि ऋषि/आप्त असम्भव का उपदेश नहीं करते।

महर्षि स्वयं ब्रह्मचर्य के नियमों का दृढ़ता से पालन करते थे। महर्षि, ब्रह्मचारी मोहन बाबा के मठ पर उनके आग्रह पर गये, परन्तु महर्षि ने उनकी शिष्याओं को उपदेश देना तथा उनसे चरण-स्पर्श करवाना स्वीकार नहीं किया। सूरत जाने से पूर्व निवास-स्थान के सम्बन्ध में लिखते हैं, ''स्थान एकान्त और बस्ती से बाहर होना आवश्यक है, प्रत्युत वह ऐसा भी होना चाहिये, जहाँ स्त्रियों का आना-जाना न हो।'' सूरत में श्री जगजीवन राम जी के बाग में ठहरे, परन्तु तीसरे ही दिन स्थान बदल कर सेठ नगीनदास के सौदागर प्रेस वाले बंगले में चले गये, क्योंकि पूर्व स्थान नदी के किनारे पर था और नदी पर स्नानादि के लिए स्त्रियाँ आती थीं। श्रीमद्दयानन्द प्रकाश अनुसार यमुना की रेती पर ध्यानावस्थित अवस्था में एक देवी द्वारा चरणों में नमन के कारण स्पर्श हो जाने से निर्जन स्थान पर तीन दिन निराहार रहे व ध्यान में रह प्रायश्चित किया। महर्षि के जीवन की ऐसी अनेकों घटनाएँ हैं, जो साधक को ब्रह्मचर्य पालन का सन्देश एवं प्रेरणा देती हैं। जो साधक नहीं हैं उनके लिए भी ब्रह्मचर्य पालन आश्रम अनुसार आवश्यक है, परन्तु साधकों के लिए तो ब्रह्मचर्य की पालना अपरिहार्य है तथा उसका कोई विकल्प नहीं है।

प्रश्नोपनिषद् में एक कथा आयी है-सुकेशा, सत्यकाम, गार्ग्य, कौशल्य, वैदर्भि व कबन्धी ये छह 'ब्रह्मपरा ब्रह्मनिष्ठा' जिज्ञासु ब्रह्म की खोज में आचार्य पिप्पलाद के पास पहुँचे। आचार्य पिप्पलाद ने कहा, ''**तान् ह स ऋषिरुवाच भूय एव तपसा ब्रह्मचर्येण श्रद्धया संवत्सरं संवत्स्यथ यथा कामं प्रश्नान् पृच्छथ यदि विज्ञास्यामः सर्वं ह वो वक्ष्याम इति**''।। प्रश्न १.२।। तुम लोग तपस्वी तो हो, परन्तु एक साल और 'तप' 'ब्रह्मचर्य' और 'श्रद्धा' पूर्वक मेरे समीप निवास करो। उसके बाद अपनी-अपनी इच्छा अनुसार प्रश्न करना। अगर हम प्रश्नों का उत्तर जानते होंगे तो सब कुछ बतला देंगे। (डॉ. सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार) प्रश्नकर्त्ता ब्रह्मनिष्ठ थे फिर भी आचार्य पिप्पलाद ने एक वर्ष तप व श्रद्धा के साथ ब्रह्मचर्यपूर्वक आश्रम में निवास करने का आदेश दिया। प्रथम प्रश्न के दसवें श्लोक में भी ब्रह्मचर्य की महत्ता का स्पष्ट उल्लेख है। ''**अथोत्तरेण तपसा ब्रह्मचर्येण श्रद्धया विद्ययात्मानमन्विष्यादित्य मभिजयन्ते...**'' जो प्रवृत्ति मार्ग को छोड़कर निवृत्ति मार्ग का आश्रय लेते हैं, वे तप, ब्रह्मचर्य, श्रद्धा और विद्या के सहारे आत्मा को ढूंढ लेते हैं। (डॉ. स. सिद्धान्त.)

छान्दोग्य उपनिषद् में प्रजापति, इन्द्र तथा विरोचन की कथा आती है जिसमें इन्द्र व विरोचन आत्मा को जानने के लिए हाथ में समिधा लेकर प्रजापति के पास जाते हैं तथा आश्रम में ३२ वर्ष तक ब्रह्मचर्यपूर्वक निवास करते हैं। उपनिषदों में स्थान-स्थान पर ब्रह्मचर्य की महिमा का लेख है। यदि कोई कहे कि ब्रह्म में विचरण करना आदि ब्रह्मचर्य का विशद अर्थ है, तो भी ब्रह्मचर्य के

'उपस्थ इन्द्रिय का संयम' इस प्राथमिक अर्थ का त्याग नहीं है ओर प्राथमिक सीढ़ी को पार किये बिना आगे नहीं बढ़ा जा सकता।

दक्षस्मृति अध्याय ७ में लिखित अष्टधा मैथुन त्याग का पालन करना सभी साधकों का लक्ष्य होना चाहिये।

स्मरणं कीर्तनं केलिः प्रेक्षणं गुह्यभाषणम्।
संकल्पोध्यावसायश्च क्रियानिष्पत्तिरेव च।।

केवल शारीरिक ब्रह्मचर्य ही ब्रह्मचर्य नहीं, मन में भी ऊपर लिखे आठ प्रकार के मैथुनों का विचार न आवे-ऐसा संकल्प, तदनुकूल प्रयास साधक को करना अभिप्रेत है। प्राणों को स्थिर कर आत्मदर्शन का कोई सरल उपाय नहीं है, अतः ब्रह्मचर्य के शारीरिक व मानसिक पालन हेतु पूर्ण श्रम किया जाना आवश्यक है। आलम्बनों के बीच रहकर उनके प्रति विचार करते-करते उनसे वितृष्णा उत्पन्न कर लेना लगभग असम्भव है, सामान्य साधक के लिए तो असम्भव ही है। टेलीविजन भी देखें, यू ट्यूब भी देख लें, राह चलते अश्लील विज्ञापन भी दिख जावें, स्त्रियों के बीच भी रहें, गन्दे गाने भी कान में पड़ते रहें तो ब्रह्मचर्य की पालना कदापि नहीं हो सकती। इस प्रकार की चर्चा से सांसारिकता में लिप्त होते हुए साधना में सफलता के अवसर नहीं हैं। यदि योग में उच्च स्थिति भी है तो भी पतित होने के अवसर अवश्य उपलब्ध हैं। कहा भी गया है कि घृतादि हवि के द्वारा अग्नि शान्त नहीं होता अपितु और अधिक बढ़ता है।

हविषा कृष्णवत्मेव, भूय एवाभिवर्धते।।

मनु महाराज स्पष्ट लिखते हैं कि माता, बहन व पुत्री किसी के साथ एकान्त में न बैठना चाहिये, क्योंकि अतीव बलवान इन्द्रियाँ ज्ञानवान मनुष्य को भी कुपथ पर खींच ले जाती हैं।

मात्रा स्वस्त्रा दुहित्रा च, न विविक्तासनोभवेत्।
बलवन्निद्रियग्रामो, विद्वांसमपि कर्षति।।

'ब्रह्मचर्य विज्ञान' पुस्तक में श्री जगनारायण देव शर्मा ने महामुनि याज्ञवल्क्य के श्लोक का अर्थ लिखा है, "शरीर, मन और वचन से सब अवस्थाओं में, सर्वदा और सर्वत्र मैथुन त्याग को ब्रह्मचर्य कहा जाता है।"

कायेन मनसा वाचा, सर्वावस्थासु सर्वदा।
सर्वत्र मैथुनत्यागो, ब्रह्मचर्यं प्रचक्षते।।

प्रश्न उठ सकता है कि यदि ब्रह्मचर्यादि की पालना ही कर ली तो फिर प्राणायाम की क्या अवश्यकता है? योगदर्शन में प्रथम श्रेणी साधकों के लिए यम, नियम व आसन के बाद प्राणायाम का उल्लेख है। द्वितीय श्रेणी के लिए तपः स्वाध्याय ईश्वर प्रणिधान का कथन है। प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हुए बिना द्वितीय व तृतीय श्रेणी में प्रवेश नहीं हो सकता। अतः यम नियमों का पालन करना तो अनिवार्य है। महर्षि उपासना विषय में यम के बारे में लिखते हैं, "इन पाँचों का ठीक-ठीक अनुष्ठान करने से उपासना का बीज बोया जाता है।" बिना यम-नियमों की पालना के केवल प्राणायाम करने से इच्छित लाभ नहीं हो सकता। कपड़े को साफ करने के लिए साबुन से धोते हैं, परन्तु यदि धोते भी जायें और साथ-साथ गन्दा भी करते जावें तो कपड़ा कभी साफ नहीं दिखेगा। जो आत्मा को प्रिय लगता है, वह उसे करता है। यदि यम-नियम की पालना में अधिक लाभ देखेंगे तो अभ्यासपूर्वक बार-बार आवृत्ति करके इनकी पालना होती चली जायेगी। इनके विरुद्ध व्यवहारों में हानि देखेंगे व छोड़ने का अभ्यास करेंगे-तो बार-बार छोड़ने के अभ्यास से दोष छूटते चले जावेंगे। एक तथ्य और स्पष्ट होना आवश्यक है कि यम-नियम आदि प्राणायाम में सहायक हैं। प्राणायाम के अभ्यास से प्राण की स्थिरता के बिना आत्म-दर्शन संभव नहीं हैं। दोषों को दूर करने तथा आत्म-दर्शन करने-दोनों के लिए प्राणायाम अपेक्षित है।

रसना व उपस्थ पर नियन्त्रण करना सर्वाधिक मुश्किल है, अतः इन दोनों पर विशेषतः विचार किया गया है। उपस्थ इन्द्रिय पर नियन्त्रण के लिए निरन्तर स्वाध्याय, विषय-दोष-दर्शन, तत्सम्बन्धी उपादानों से दूर रहना, पुनः पुनः अभ्यास करना, मन को हर समय ओ३म् या गायत्री मन्त्र आदि जप-कार्य में लगाये रखना, प्रत्येक उस वस्तु, विचार आदि से अलग रहना जिससे विषय के जागृत होने की संभावना हो- इसका सतत प्रयत्न करना चाहिये। भोजन का ब्रह्मचर्य से सीधा सम्बन्ध है, सभी को अनुभूत भी होगा। अतः भोजन से राजसिक खाद्य दूर होंगे तो मन को सात्त्विक बनाने में सहायता मिलेगी। ब्रह्मचर्य का पालन

करने में सहायता मिलेगी। एकान्त में साधना भी होती है तथा अधिकांशत: पाप के विचार भी आते हैं, अत: प्रारम्भिक साधकों को एकान्त के समय सावधानी बरतनी चाहिये तथा किसी भी क्षण मन को शिथिल नहीं छोड़ना चाहिये, बल्कि एकान्त के समय में स्वाध्याय जप आदि निरन्तर करते रहना चाहिये। जिस विषय में विचार दृढ़ करने हैं उससे सम्बन्धित शास्त्र का स्वाध्याय करना हितकर होता है। ब्रह्मचर्य महिमा वाली पुस्तकों का स्वाध्याय थोड़े-थोड़े काल पश्चात् करते रहना चाहिये। इससे विचारों में दृढ़ता बनी रहेगी तथा व्रत पालन में सहायता मिलेगी।

ब्रह्मचर्य की पालना कठिन अवश्य है, परन्तु श्रद्धापूर्वक गुण-दर्शन करते हुए अभ्यास में निरन्तर लगे रहें, त्रुटि हो जाने पर उसका अहसास कर लें, पुन: प्रयास करें तो कुछ भी असम्भव नहीं है।

यदयदिह किञ्चित् सन्धाय, पुरुषस्तप्यते तपः।
सर्वमेवादवाप्नोति, विद्यया चेति नः श्रुतम्।।

महाभारत

आचार्य सत्यानन्द जी वेदवागीश के शब्दों में- जिस-जिस वस्तु का लक्ष्य रख के मनुष्य तप तपता है, सब उसको वह तप और विद्या से प्राप्त कर लेता है।

व्याकरण एवं दर्शन के अध्ययन हेतु प्रवेश प्रारम्भ

महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी **परोपकारिणी सभा के द्वारा 'महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल' ऋषि उद्यान, अजमेर** में पिछले १८ वर्षों से प्रारम्भिक संस्कृत ज्ञान, पाणिनीय व्याकरण और दर्शनों के अध्ययन-अध्यापन का कार्य सुचारु रूप से चल रहा है। अत: व्याकरण एवं दर्शन पढ़ने के इच्छुक विद्यार्थी प्रवेश ले सकेंगे।

इस काल में ऋषि उद्यान में प्रतिदिन यज्ञोपरान्त उपदेश व प्रवचन का लाभ भी प्राप्त हो सकेगा। समय-समय पर विविध विषयों पर विद्वानों द्वारा कक्षायें भी होती रहेंगी। ब्रह्मचारियों के लिए निवास और भोजन व्यवस्था नि:शुल्क रहेगी। प्रवेश लेने वाले ब्रह्मचारियों के लिए निम्नलिखित बातें ध्यान देने योग्य हैं-

- आयु न्यूनतम १६ वर्ष हो।
- न्यूनतम १०वीं कक्षा पढ़े हुए विद्यार्थी प्रवेश ले सकेंगे।
- गुरुकुल के अनुशासन का पालन करना अनिवार्य होगा।

अधिक जानकारी हेतु सम्पर्क करें।

स्वामी विष्वङ् परिव्राजक - ९४१४००३७५६

समय- ९:००-१०:००प्रात:, १२:३०-१:३० मध्याह्न

पता- महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल, ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर (राज.) ३०५००१

अतिथि-यज्ञ के होताओं से अनुरोध

अतिथि-यज्ञ के होताओं से उनकी वैवाहिक वर्षगाँठ अथवा जन्मदिन व विभिन्न अवसरों पर ५१०० रु. प्रतिवर्ष सभा को प्राप्त होते रहते हैं। जो महानुभाव संकल्प के साथ इस पुनीत कार्य से जुड़े हुए हैं, उनसे हमारा अनुरोध है कि वे अपनी राशि भेजते समय **जन्मतिथि/वैवाहिक वर्षगाँठ आदि व दूरभाष संख्या** सूचित करना न भूलें। साथ ही यह भी अवश्य सूचित करा देवें कि पहले से भिजवा रहे हैं अथवा नया शुरू किया है। आप अपनी राशि सभा के बैंक खाते में नकद अथवा चैक द्वारा जमा करा सकते हैं।

जब तक सबकी रक्षा करने वाला धार्मिक राजा वा आप्त विद्वान् न हो तब तक विद्या और मोक्ष के साधनों को निर्विघ्नता से पाने के योग्य कोई भी मनुष्य नहीं होता है और न मोक्ष सुख से अधिक कोई सुख है।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.५२

जो विद्या की वृद्धि के लिए पठन-पाठन रूप यज्ञ कर्म्म करने वाला मनुष्य है वह अपने यज्ञ के अनुष्ठान से सब की पुष्टि तथा संतोष करने वाला होता है इससे ऐसा प्रयत्न सब मनुष्यों को करना उचित है।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ७.२७

शङ्का समाधान - १६

डॉ. वेदपाल, मेरठ

शङ्का-१. पुलस्त्य ऋषि की शादी ऑस्ट्रेलिया में तृणबिन्दु की पुत्री से हुई थी, उस लड़की का क्या नाम था?

२. शास्त्र में ओ३म् का वाचक 'उद्गीथ' बताया है, उद्गीथ का क्या अर्थ है?

३. जब मुँह एक है, तब सन्ध्या करते समय वाक्-वाक् क्यों कहते हैं?

विद्यार्थी सत्येन्द्र कुमार आर्य, सण्डी नंगला, रायपुर (छत्तीसगढ़)

समाधान-१. पुलस्त्य ब्रह्मा के मानस पुत्र (मनु. १.३५) के रूप में प्रसिद्ध हैं। इनकी पत्नी का नाम **गो (गौ)** है, जिससे इन्हें वैश्रवण नामक पुत्र की प्राप्ति हुई। तद्यथा-

पुलस्त्यो नाम तस्यासीन्मानसो दयितः सुतः।
तस्य वैश्रवणो नाम गवि पुत्रोऽभवत् प्रभुः।।

महाभारत वनपर्व अ. २७४.१२

यही वैश्रवण लंका के राजा हुए। इन्हीं के पास पुष्पक विमान था। वैश्रवण के भतीजे (विश्रवा + पुष्पोत्कटा के पुत्र) रावण ने वैश्रवण को राज्य से बहिष्कृत कर लंका पर अधिकार कर लिया था-द्रष्टव्य म.भा. वनपर्व अ. २७४-२७५।

२. 'उद्गीथ' शब्द-उत् उपसर्गपूर्वक 'गै शब्दे' (भ्वादि.) धातु से 'गश्चोदि' (उणादि २.१०) सूत्र से थक् प्रत्यय होकर निष्पन्न होता है। महर्षि दयानन्द **उद्गीथ शब्द से उच्च स्वर से उच्चारित सामध्वनि अथवा प्रणव-ओ३म् का ग्रहण करते हैं। तद्यथा-''उद्गीयते उच्चैः शब्दायते स उद्गीथः सामध्वनि प्रणवो वा''**-द्रष्टव्य-उणादिवृत्ति २.१०।

वामन शिवराम आप्टे-'संस्कृत हिन्दी शब्दकोष' पृ. १९५ में- **''सामवेद के मन्त्रों का गायन, सामवेद का उत्तरार्ध, ओम् जो परमात्मा का तीन अक्षर का नाम है।''**-अर्थ करते हैं।

ऋक् प्रातिशाख्य में शब्द/पद के नाम, आख्यात, उपसर्ग, निपात ये चार प्रविभाग (वैयाकरण एवं निरुक्तकार भी यही प्रविभाग करते हैं।) करते हुए क्रियावाचक-आख्यात में **विशिष्ट अर्थ के उत्पादक को उपसर्ग कहा है-**

नामाख्यातमुपसर्गो निपातश्चत्वार्याहुः पदजातानि शब्दाः।
क्रियावाचकमाख्यातमुपसर्गो विशेषकृत्।।

पटल १२.५,८

निरुक्त के टीकाकार दुर्ग का उपसर्ग विषयक कथन है कि ये उपसर्ग धातु से विशिष्ट अर्थ को उत्पन्न करते हैं अर्थात् धात्वर्थ में वैशिष्ट्य के जनक हैं-

'आख्यातमुपगृह्य अर्थविशेषमिमे
तस्यैव सृजन्तीति उपसर्गाः'

-निरुक्त टीका १.३

स्कन्दस्वामी का कथन है कि विशिष्ट अर्थ को सृष्ट/उत्पन्न करने के कारण ये उपसर्ग हैं-

'उपेत्य नामाख्यातयोः अर्थविशेषं सृजन्तीति उपसर्गाः'-१.३

क्षीरस्वामी ने उत् उपसर्ग के जन्म आदि अट्ठाईस अर्थों का उल्लेख किया है। इनमें 'उच्चैस्त्व' भी है। इस प्रकार उत् पूर्वक 'गै शब्दे' से निष्पन्न 'उद्गीथ' का अर्थ होगा- **इस प्रकार का शब्द जो व्यक्ति/शब्द प्रयोक्ता के 'उच्चैस्त्व' का हेतु हो अर्थात् उसके उत्कर्ष का हेतु हो। उत्कर्ष का हेतु प्रणव से बढ़कर क्या हो सकता है?** आंशिक उत्कर्षप्रद तो अन्य भी हो सकते हैं। वास्तविक उत्कर्ष तो ईशस्तुति से ही सम्भव है। स्तुति का सर्वोत्तम प्रकार **प्रणव जप है-यही उद्गीथ है।**

छान्दोग्य उपनिषद् में उद्गीथोपासना का विस्तृत विवेचन है। जिज्ञासु पाठक उपनिषद् के प्रथम प्रपाठक के खण्ड १-८ तक देखकर लाभान्वित हो सकते हैं।

पाणिनि धातुपाठ में 'गै' धातु स्तुत्यर्थ में पठित नहीं है।

यास्क ने (निरुक्त १.८) 'गै' को स्तुत्यर्थक माना है। ब्राह्मण ग्रन्थों में गायत्री के उपलब्ध निर्वचन यास्क का

आधार हैं, अथवा पाणिनि तक आते-आते 'गै' धातु का अर्थ संकोच होकर (स्तुति अर्थ छूट गया और) शब्द मात्र अर्थ अवशिष्ट रह गया।

३. मुख का बाह्य गोलक स्पष्टतः एक है। यह गोलक अशित-पीत पदार्थों (अन्नादि भक्ष्य तथा जलादि पेय) को अन्दर उदर तक पहुँचाने का प्रवेश-द्वार रूपी साधन है। साथ ही इस गोलक में एक अन्य इन्द्रिय वाक्-''**वक्ति शब्दानुच्चारयति यया सा वाक्**''-जिससे शब्दों का उच्चारण किया जाता है, वह भी है और यह अति महत्त्वपूर्ण है।

मन्त्रस्थ प्रथम वाक्-**वाग्-इन्द्रिय के लिए** तथा द्वितीय वाक् आपके द्वारा **दृष्ट गोलक/मुख के लिए है**। यहाँ मुख के लिए वाक् पद का प्रयोग गौणोपचार है। तद्यथा-

'वाग् वाण्यां गौणवृत्त्या तु शब्दे वक्त्रे च केचन।'

- नानार्थार्णव संक्षेपः, पृष्ठ -६

सांख्य दर्शन का अध्यापन

महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा के द्वारा 'महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल' ऋषि उद्यान, अजमेर में वर्षों से संस्कृत व्याकरण और दर्शनों का अध्यापन कार्य सुचारु रूप से चल रहा है। इसी क्रम में 'महर्षि कपिल मुनि' विरचित 'सांख्य दर्शन' का अध्यापन स्वामी विष्वङ् परिव्राजक द्वारा ०१ जनवरी २०१८ से विधिवत् रूप से कराया जायेगा। यह दर्शन ६ महीने में पूर्ण हो जावेगा।

इस काल में ऋषि उद्यान में प्रतिदिन यज्ञोपरान्त उपदेश व प्रवचन का लाभ भी प्राप्त हो सकेगा। समय-समय पर विविध विषयों पर विद्वानों द्वारा कक्षाएँ भी होती रहेंगी। ब्रह्मचारियों हेतु निवास और भोजन व्यवस्था निःशुल्क है। अन्य शिक्षार्थियों के लिये निम्नलिखित नियम लागू होंगे-

१. पढ़ने के इच्छुक लोग अपना पंजीकरण सुनिश्चित कर लेवें। २. पृथक् आवास हेतु प्रति व्यक्ति २,०००/-दो हजार रुपये प्रतिमास अग्रिम जमा कराना आवश्यक है। ३. भोजन, प्रातराश इत्यादि के लिये प्रति व्यक्ति प्रतिमास ३,०००/-तीन हजार रुपये देय होंगे। ४. सामूहिक रूप से आवास के लिये कोई शुल्क नहीं लगेगा और पुरुषों तथा महिलाओं के लिये अलग-अलग दीर्घ कक्ष में व्यवस्था होगी। ५. बच्चों को साथ लाये जाने पर प्रार्थी को सत्र में प्रवेश नहीं दिया जायेगा। ६. किसी भी मादक द्रव्य, चाय-कॉफी आदि का सेवन निषिद्ध होगा। ७. शिक्षार्थियों को आश्रम के साफ-सफाई एवं रखरखाव में योगदान करना अपेक्षित होगा। ८. नियम व अनुशासन का पालन करना सभी को अनिवार्य होगा। ९. अकेली महिला हो, तो अवस्था ५० या ५० से अधिक होनी चाहिए। १०. प्रत्येक व्यक्ति को यज्ञशाला में आयोजित सत्संग एवं देवयज्ञ में दोनों समय आना अत्यावश्यक है।

नोटः- अपना पंजीकरण फोन से करा सकते हैं एवं अग्रिम राशि ऑनलाइन जमा कराने हेतु नीचे लिखे बैंक में जमा करा सकते हैं।

खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर (PAROPKARINI SABHA AJMER)

१. बैंक का नाम-**भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।**

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**10158172715**

IFSC-SBIN0007959

२. बैंक का नाम-**आई.डी.बी.आई**, पावर हाउस के सामने,

जयपुर रोड, अजमेर। बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**091104000057530**

IFSC-IBKL0000091

सम्पर्क सूत्र- परोपकारिणी सभा - ०१४५-२४६०१६४, ऋषि उद्यान - ०१४५-२६२१२७०

वैदिक पुस्तकालय अजमेर
द्वारा प्रकाशित नये संस्करण

१. वेदपथ के पथिक (आचार्य धर्मवीर स्मृति ग्रन्थ)

पृष्ठ संख्या-२६४

मूल्य-रु. २००/-(आधे मूल्य पर उपलब्ध)

परोपकारिणी सभा के यशस्वी प्रधान डॉ. धर्मवीर जी का जीवन सत्य के लिये संघर्षपूर्ण रहा है। विषम परिस्थितियों में भी उन्होंने ईश्वर, वेद और धर्म को अपने जीवन से तनिक भी अलग नहीं होने दिया और यही विशेषता रही, जिसके कारण वे एक आदर्श आचार्य, आदर्श नेता, आदर्श लेखक, आदर्श सम्पादक एवं आदर्श उपदेशक के रूप में प्रतिष्ठित हुए। उनके जीवन की कही-अनकही घटनाएँ हमें भी प्रेरणा दें, इस दृष्टि से ये ग्रन्थ अवश्य पठनीय है। जिन्होंने डॉ. धर्मवीर जी को निकट से देखा है, जो उनके जीवन की घटनाओं के साक्षी रहे हैं, उनके संस्मरण इस कर्मयोगी के जीवन की बारीकियों को उजागर करते हैं। ग्रन्थ के प्रारम्भ में चित्रों के माध्यम से भी उनके जीवन की कुछ झलकियों को दर्शाया गया है।

२. महर्षि दयानन्द सरस्वती के कुछ हस्तलिखित पत्र-

पृष्ठ संख्या-३३६ **मूल्य**-रु. २००/-

महर्षि दयानन्द, उनके उद्देश्यों, कार्यों, योजनाओं एवं व्यक्तित्व को समझने में उनके द्वारा लिखे पत्र उतने ही उपयोगी हैं, जितना कि उनका जीवन-चरित्र। ये पत्र महर्षि के हस्तलिखित हैं। पुस्तक की विशेषता यह है कि इसमें मूल-पत्रों की प्रतिलिपि दी गई है और साथ ही वह पत्र टाइप करके भी दिया गया है। यह पुस्तक विद्वानों के दीर्घकालीन पुरुषार्थ का फल है। जनसामान्य इससे लाभ ले-यही आशा है।

३. अंग्रेज जीत रहा है-

लेखक - प्रो. धर्मवीर

पृष्ठ संख्या-२२२ **मूल्य**-रु. १५०/-

इस पुस्तक में डॉ. धर्मवीर जी के 'भाषा और शिक्षा' विषय पर लिखे गये ४२ सम्पादकीयों का संकलन किया गया है। 'परोपकारी' पत्रिका में लिखे गये इन सम्पादकीयों को पुस्तक रूप में प्रकाशित करने की माँग समय-समय पर उठती रही है। अत: पुस्तक पाठकों के समक्ष प्रस्तुत है। डॉ. धर्मवीर जी का चिन्तन बेजोड़ था। वे जिस विषय पर जो भी लिखते वह अद्वितीय हो जाता था। उनके अन्य सम्पादकीयों का प्रकाशन भी प्रक्रिया में है। पुस्तक का आवरण व साज-सज्जा अत्याकर्षक है।

४. स्तुता मया वरदा वेदमाता-

लेखक - प्रो. धर्मवीर

पृष्ठ संख्या-१३५ **मूल्य**-रु. १००/-

वेद ईश्वर प्रदत्त आचार संहिता है। वेद की आज्ञा ईश्वर की आज्ञा है और वही धर्म है, इसलिये मानव मात्र की समस्त समस्याओं का समाधान वेद में होना ही चाहिये। वेद के कुछ ऐसे ही सूक्तों की सरल सुबोध व्याख्या ही इस पुस्तक में की गई है। पुस्तक की भाषा इतनी सरल है कि नये-से नये पाठक को भी सहज ही आकर्षित कर लेती है। व्याख्याता लेखक आचार्य डॉ. धर्मवीर जी के गहन आध्यात्मिक एवं व्यावहारिक चिन्तन व अनुभवों के परिणामरूप यह पुस्तक है।

५. इतिहास बोल पड़ा-

लेखक - प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु

पृष्ठ संख्या-१५९ **मूल्य**-रु. १००/-

इस पुस्तक में इतिहास की परतों से कुछ दुर्लभ तथ्य निकालकर दिये गये हैं, जो कि आर्यसमाज और महर्षि दयानन्द सरस्वती के गौरव का बखान करते हैं। पुस्तक के लेखक प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु हैं। ऋषि के समय में देश-विदेश से छपने वाले पत्र-पत्रिकाओं के उद्धरण इस पुस्तक में दिये गये हैं।

६. बेताल फिर डाल पर

लेखक - प्रो. धर्मवीर

पृष्ठ संख्या-१०४ **मूल्य**-रु. ६०/-

डॉ. धर्मवीर जी की हॉलैण्ड एवं अमेरिका यात्रा का विवरण एवं अनुभव इस पुस्तक में है। विदेश में आर्यसमाज की स्थिति, कार्यशैली, वहाँ की परिस्थितियाँ एवं विशेषताओं को यह पुस्तक उजागर करती है। यायावर प्रवृत्ति के विद्वान् आचार्य धर्मवीर जी की यह पुस्तक एक प्रचारक के जीवन पर भी प्रकाश डालती है।

७. लोकोत्तर धर्मवीर-

लेखक - तपेन्द्र वेदालंकार,

पृष्ठ संख्या-४४ **मूल्य**-रु. २०/-

तपेन्द्र वेदालंकार (सेवानिवृत्त आई.ए.एस.) ने इस पुस्तक में डॉ. धर्मवीर जी के जीवन की कुछ ऐसी घटनाओं पर प्रकाश डाला है, जिनसे धर्मवीर जी के महान् लक्ष्यों व तदनुरूप कार्यशैली का पता चलता है। इस लघु पुस्तक से प्रेरणा लेकर प्रत्येक आर्य ऋषि दयानन्द और आर्यसमाज के उद्देश्यों को पूर्ण करने में उत्साहित हो-यही आशा है।

वैदिक पुस्तकालय, अजमेर से क्रय की जाने वाली पुस्तकों की राशि ऑनलाइन जमा कराने हेतु

खाता धारक का नाम - **वैदिक पुस्तकालय, अजमेर।**

बैंक का नाम - **पंजाब नेशनल बैंक, कचहरी रोड, अजमेर।**

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या - **0008000100067176**

IFSC - PUNB0000800

लेखकों से निवेदन

परोपकारी में उन लेखों, कविताओं, रचनाओं को स्थान दिया जाता है, जो **मौलिक व अप्रकाशित** हों। अत: सभी लेखकों से निवेदन है कि वे अपनी उन्हीं रचनाओं को भेजें जो मौलिक व अप्रकाशित हों।

अनेक लेखक मौलिक व अप्रकाशित रचना तो भेजते हैं, किन्तु उसे एक साथ **अनेक पत्रिकाओं को भेजते हैं।** अत: लेखकों से यह भी निवेदन है कि वे कृपया परोपकारी को वे ही रचना भेजें, जो अन्य पत्रिकाओं के लिए न भेजी हों। परोपकारी में छपने के बाद यदि अन्यत्र भेजना चाहें तो यह उनकी इच्छा पर निर्भर करता है।

कृपया लेख के अन्त में अपना **पूरा पता व चल-दूरभाष संख्या अवश्य लिखें।** लेख के स्वीकृत-अस्वीकृत होने की सूचना चल-दूरभाष पर संक्षिप्त संदेश द्वारा प्रेषित कर दी जायेगी। **परोपकारिणी सभा द्वारा रचनाओं के लिए किसी प्रकार का भुगतान नहीं किया जाता है।**

रचयिता अपनी रचना की एक प्रति कृपया अपने पास रखकर भेजें, क्योंकि **अस्वीकृत रचनायें डाक द्वारा लौटाई नहीं जाती हैं।** स्वीकृत रचना परोपकारी के किसी आगामी अङ्क में देखी जा सकती है। रचना के प्रकाशन में छ: माह या अधिक समय भी लग सकता है, अत: कृपया तब तक रचना को अन्यत्र न भेजें। **-संपादक**

ईश्वर का आश्रय न करके कोई भी मनुष्य प्रजा की रक्षा नहीं कर सकता। जैसे ईश्वर सनातन न्याय का आश्रय करके सब जीवों को सुख देता है, वैसे ही राजा को भी चाहिये कि प्रजा को अपनी न्याय-व्यवस्था से सुख देवे।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ७.३९

मनुष्यों को चाहिये कि सदा यज्ञ का आरम्भ और समाप्ति को करें और संसार के जीवों को अत्यन्त सुख पहुँचावें।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.६२

जब तक मनुष्य सुख-दु:ख, हानि और लाभ की व्यवस्था में परस्पर अपने आत्मा के तुल्य दूसरे को न जानते तब तक पूर्ण सुख को प्राप्त नहीं होते, इससे मनुष्य लोग श्रेष्ठ व्यवहार ही किया करें। **-महर्षि दयानन्द, यजु.,भा ५.४०**

क्या संस्कृत पढ़ने से अर्थार्जन नहीं हो सकता?

श्रीशदेव पुजारी

समाज में एक भ्रम फैलाया गया है कि संस्कृत पढ़ने से छात्र अर्थार्जन नहीं कर सकता। उसे केवल शिक्षक बनना पड़ता है या पुरोहित। मेरा, इस प्रकार की धारणा रखने वालों से प्रश्न है कि जो संस्कृतेतर छात्र बी.ए., बी.कॉम, बी.एससी. होते हैं, उनके लिए कौनसी नौकरी बाट जोह रही है।

हमारे देश में स्नातक उपाधि को आधारभूत उपाधि माना जाता है। उसकी प्राप्ति के पश्चात् आप प्रतियोगी परीक्षा उत्तीर्ण कर नौकरी पा सकते हैं। जो संस्कृत विषय लेकर स्नातक बनते हैं,उनके लिए किस प्रतियोगी परीक्षा का द्वार बन्द है? उत्तर आयेगा- किसी का नहीं। स्नातक बनने के पश्चात् अधिकतर छात्र प्रबन्धन शास्त्र (एम.बी.ए.) पढ़ते हैं। क्या संस्कृत से स्नातक प्रबन्धन शास्त्र नहीं पढ़ सकते? संस्कृत के छात्र यू.पी.एस.सी. परीक्षा उत्तीर्ण करते हैं। चोटीपुरा गुरुकुल की कन्या यू.पी.एस.सी. परीक्षा में तृतीय स्थान पर आयी। लखनऊ के संस्कृत परिवार का युवक आई.ए.एस. इसी वर्ष हुआ। बहुत से छात्र यू.पी.एस.सी. परीक्षा के लिए संस्कृत विषय लेते हैं, यह मेरा अनुभव है। आई.आई.टी. या अन्य अभियन्त्रण शास्त्र पढ़े छात्र भी पाठ्यक्रम के विषयों को छोड़कर आई.ए.एस. बनने के लिए संस्कृत विषय चुनते हैं और सम्भाषण सीखने के लिए संस्कृत भारती के पास आते हैं। आश्चर्य तब हुआ जब एक मुसलमान बी. टेक की हुई छात्रा, संस्कृत सीखने संस्कृत भारती की ओर से संचालित संवादशाला में पहुँची। वहाँ १४ दिन का आवासीय शिविर होता है। वह यू.पी.एस.सी. की परीक्षा देने वाली थी।

विश्वभर में योग का प्रचलन बढ़ रहा है, यह सर्वविदित है। किन्तु अधिकतम लोगों को योग के नाम पर केवल आसन और प्राणायाम का कुछ हिस्सा ज्ञात है। अष्टांग योग की ओर अब कुछ लोग (विशेषकर विदेशी) उन्मुख होने लगे हैं। उन्हें पढ़ायेगा कौन? जो योग दर्शन का ज्ञाता है वही न? क्या विश्व की जिज्ञासा शान्त करने के लिए हमारे पास योग दर्शन के पर्याप्त शिक्षक हैं? इस वर्ष भारत सरकार के विदेश मन्त्रालय द्वारा पहला प्रयास किया गया। योग दिवस के निमित्त भारत से कुछ योग दर्शन जानने वाले विद्वानों को विदेशों में भेजा गया। यह माँग बढ़ने वाली है। विश्व के कुछ ही देश आंग्ल भाषा समझते हैं। शेष सब अपनी-अपनी भाषा में पढ़ते हैं, जैसे- जर्मन, फ्रेंच, रशियन, जापानी, चीनी, हीब्रू इत्यादि। इसलिए इन देशों में योग दर्शन पढ़ाना है तो पहले संस्कृत पढ़ानी होगी, कारण- आंग्ल भाषा से काम नहीं चलेगा। विश्व की सभी भाषाएँ दार्शनिक पढ़ें, यह तो सम्भव नहीं है। वैसे भी योग शास्त्र-भाष्य ग्रन्थ, टीका ग्रन्थ इत्यादि पढ़ने के लिए संस्कृत आना अनिवार्य है।

यही हाल आयुर्वेद का है। विदेशों में आयुर्वेद की औषधियों की माँग लगातार बढ़ रही है। कुछ समय पश्चात् आयुर्वेद पढ़ने के लिए विदेशी छात्र प्रवृत्त होंगे। तब आयुर्वेद के ग्रन्थों को पढ़ने के लिए संस्कृत का ज्ञान आवश्यक हो जाएगा। जो-जो अन्य भारतीय शास्त्र हैं, उनको पढ़ने के लिए भी संस्कृत अनिवार्य है। जैसी कि विदेशियों की जिज्ञासु प्रवृत्ति है, वे अवश्य संस्कृत पढ़ेंगे। तब पढ़ाने वाले शिक्षकों की वैश्विक माँग होगी। जैसा कि मैंने पूर्व में लिखा है- संस्कृत आंग्ल माध्यम में नहीं सिखा पाएँगे। अतः अनिवार्य रूप से संस्कृत माध्यम में पढ़ाना पड़ेगा। क्या भारत के शिक्षक इसके लिए तैयार हैं। यह मेरी कल्पना का विलास भर नहीं है। एक वर्ष पूर्व संस्कृत भारती के पास एक स्पेनिश भाषी architect महिला आयी। उसे भारतीय architecture पढ़ना था। उसको यह समझ में आ गया कि भारतीय architecture पढ़ने के लिए संस्कृत आना अनिवार्य है। उसने संस्कृत भारती के बेंगलूर कार्यालय में रुक कर संस्कृत सीखी। तत्पश्चात् भारतीय architecture पर उसने अपना प्रबन्ध लिखा। यह हमारा दुर्भाग्य है कि भारतीय अपनी विद्या सिखाने के लिए तत्पर नहीं हैं। नहीं तो जैसे आयुर्वेद के पाठ्यक्रम में संस्कृत सीखना अनिवार्य है, वैसा सभी व्यावसायिक महाविद्यालयों में होता। वर्तमान केन्द्र सरकार ने योजनापूर्वक

व्यावसायिक महाविद्यालयों में ऐच्छिक विषय के रूप में संस्कृत लाने का प्रयास प्रारम्भ किया है। लगभग दो सौ महाविद्यालयों में जहाँ संस्कृत विषय पाठ्यक्रम का हिस्सा नहीं है, वहाँ केन्द्र सरकार ने अपनी ओर से वेतन की व्यवस्था कर प्राध्यापक को भेजा है। इच्छुक छात्र एवं प्राध्यापक संस्कृत की कक्षाओं में बैठते हैं।

जहाँ तक विद्यालयीन शिक्षा का सम्बन्ध है, सर्वाधिक शिक्षक आंग्ल भाषा के हैं। तत्पश्चात् संस्कृत का ही क्रम आता है। उच्च शिक्षा में तो संस्कृत प्राध्यापकों की संख्या सर्वाधिक है। कारण सामान्य महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों में संस्कृत की शिक्षा दी जाती है। इस कारण प्राध्यापक भी नियुक्त होते हैं। इसके अलावा १५ की संख्या में संस्कृत के विश्वविद्यालय हैं। इतनी संख्या में तो किसी विषय विश्वविद्यालय नहीं हैं। प्रत्येक संस्कृत विश्वविद्यालय में कम से कम साहित्य, व्याकरण, दर्शन, वेद, ज्योतिष एवं शिक्षाशास्त्र- ये विभाग तो होते ही हैं। अत: प्रत्येक विभाग में आचार्य, सह आचार्य, सहायक आचार्य- ये पद तो सृजित किये ही जाते हैं। इस कारण महाविद्यालयीन प्राध्यापकों की संख्या बढ़ जाती है।

जहाँ तक पुरोहितों का प्रश्न है, वे तो ८ वर्ष की अवस्था में गुरुकुल में प्रविष्ट होते हैं। वहाँ ६ से १२ वर्ष तक वेदाध्ययन कर गुरुकुल के विद्यार्थी पौरोहित्य करने लगते हैं। समाज में पुरोहितों की आवश्यकता अधिक होने के कारण वैदिकों को १४वें वर्ष में ही धन दक्षिणा के रूप में प्राप्त होने लगता है। इस प्रकार का कौन सा पाठ्यक्रम भारत में है जो वय के १४ वर्ष से ही धन देने लगे, और तो और, क्या यजमान और क्या उसकी पत्नी, उसके घर के सभी व्यक्ति पुरोहित के चरण-स्पर्श करते हैं। अत: संस्कृत या वेद का विद्यार्थी अन्य विषयों की अपेक्षा कम बेरोजगार है।

सामान्यत: भारतीय भाषा के पत्रकार लिखते या बोलते समय अशुद्ध भाषा का प्रयोग करते हैं, अत: यदि संस्कृत भाषा आत्मसात किया हुआ स्तम्भ लेखक या संवाददाता बन जाता है तो वार्ता लेखन या कथन में शुद्धता आयेगी, तभी समाज भी शुद्ध भाषा का प्रयोग सीखेगा।

अत: निवेदन है कि संस्कृत के अध्ययन से अर्थार्जन कैसे होगा, यह चिन्ता त्यागें और अधिक मात्रा में संस्कृत सीखें।

एक आहुति
अपने आचार्य के लिए........

ऋषि दयानन्द की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा की तन, मन, धन से सेवा करने वाले, उसे अपनी मातृवत् समझने वाले और यहाँ तक कि अपना जीवन समर्पित कर देने वाले डॉ. धर्मवीर आज अपना समस्त भार आर्य जनता अर्थात् अपने उत्तराधिकारियों पर छोड़ गये हैं। उन्होंने ऋषि के स्वप्नों को अपना कर्त्तव्य समझकर सभा को गगनचुंबी ऊँचाइयों तक पहुँचाया। अनेक नये प्रकल्प चलाये यथा-वैदिक गुरुकुल, गौशाला, आश्रम, अतिथियों के ठहरने व खान-पान की नि:शुल्क व्यवस्था आदि। उन्होंने जो-जो कार्य छेड़े उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति में कभी न्यूनता न आने दी। परोपकारिणी सभा ऐसे पुत्र को प्राप्त कर गौरव का अनुभव करती है और बिछुड़कर शोकग्रस्त होने का भी। उनके द्वारा शुरु किये कार्य कभी शिथिल न पड़ें, इस कारण **सभा ने डॉ. धर्मवीर जी की स्मृति में एक करोड़ रु. की स्थिर निधि बनाने का संकल्प लिया है,** जिससे कि धन धर्म के काम आ सके। इसमें सन्देह नहीं कि ये समस्त कार्य आर्य जनता के सहयोग से ही प्रारम्भ हो सके हैं और सहयोग से ही चल भी रहे हैं। इसलिये इसमें भी सन्देह नहीं कि सभा के इस संकल्प को आर्य जनता शीघ्र पूर्णता की ओर पहुँचा देगी और शायद उससे भी कहीं बढ़कर। यज्ञ तो हवि माँगता है। बिना हवि के यज्ञ की कल्पना भी क्या? बस देरी तो सूचित होने की है। हवि बनना तो आर्यों के खून में है, तन से, मन से अथवा धन से।

आप अपना दान चैक, ड्राफ्ट या सभा के खाते में सीधे भी भेज सकते हैं। कृपया, राशि भेजने के पश्चात् सभा में दूरभाष या पत्र द्वारा अवश्य सूचित कर दें।

- मन्त्री

अमर शहीद स्वामी श्रद्धानन्द

वेदारीलाल आर्य

डरेंगे न पिस्तौल वार से हम,
न पीछे हटे हैं धर्म के प्रचार से हम।
मिटेगी न सख्ती से हस्ती हमारी,
दबाने से होगी न पस्ती हमारी।।

संवत् १९४१ के माघ मास का रविवार था। आर्य समाज बच्छोवाली का साप्ताहिक सत्संग चल रहा था। भाई दित्तासिंह और जवाहरसिंह ने प्रसन्नता प्रकट करते हुए समाज में एक नवयुवक के प्रवेश की घोषणा की। नवयुवक ने अपने आन्तरिक सात्विक भावों से कहा- हम सबके कर्त्तव्य और मन्तव्य एक होने चाहिएं। जो वैदिक धर्म के एक-एक सिद्धान्त के अनुकूल अपना जीवन ढाल नहीं लेगा, उसको उपदेशक बनने का साहस नहीं करना चाहिए। भाड़े के टट्टुओं से धर्म का प्रचार नहीं हो सकता। इस पावन कर्म के लिए स्वार्थ त्यागी पुरुषों की आवश्यकता है। पंजाब के आर्यसमाज के केन्द्र बिन्दु लाला सांईदास ने अपने मित्रों से कहा- देखो यह आर्यसमाज को तारते हैं या डुबाते हैं। यह नवयुवक और कोई नहीं, वरन हमारे लाला मुंशीराम जी थे, जो आगे चलकर स्वामी श्रद्धानन्द बने।

इनका जन्म फाल्गुन कृष्ण त्रयोदशी संवत् १९१३ वि. को जिला जालन्धर के ग्राम तलवन में हुआ था। पिता श्री नानकचन्द जी उत्तर प्रदेश पुलिस में कोतवाल के पद पर थे। संवत् १९२३ में मुंशीराम का यज्ञोपवीत संस्कार होने के बाद उनकी अनियमित पढ़ाई शुरु हुई। पिता का स्थानान्तरण, काशी, मिरजापुर, बलिया, हमीरपुर, बांदा आदि स्थानों पर होता रहा। संवत् १९३५ में इलाहाबाद के म्योर कॉलेज से एम.ए. की परीक्षा दी। इसी मध्य मुंशीराम का विवाह (संवत् १९३४ वि.) जालन्धर के राव सालिगराम की पुत्री शिवदेवी के साथ हुआ। इसके पश्चात् वह इलाहाबाद से बरेली आ गए। श्रावण १४, संवत् १९३६ वि. के दिन ऋषि दयानन्द के बरेली आगमन पर सभा के प्रबन्ध का भार इनके पिता कोतवाल नानकचन्द पर था। पहले दिन के व्याख्यान के पश्चात् अपने नास्तिक पुत्र के सुधार की आशा से उन्होंने पुत्र को कहा- बेटा मुंशीराम एक दण्ड संन्यासी आए हैं, वह विद्वान् और योगिराज हैं। उनके वक्तव्य सुनकर तुम्हारे संशय दूर हो जायेंगे। उस समय तक मुंशीराम अंग्रेजी उपन्यास पढ़कर तथा पिता के साथ विभिन्न शहरों में घूमकर धर्म से विमुख हो अन्य बुराइयों में फंसकर पूर्ण नास्तिक हो चुके थे।

यद्यपि केवल संस्कृत जानने वाले के मुख से बुद्धि की कोई बात की आशा न थी, परन्तु जाने पर पहले दस मिनट के व्याख्यान ने ही उन पर विलक्षण प्रभाव डाला। फिर तो ऋषि के सत्संग में सर्वप्रथम उपस्थित होने वाले और सबसे अन्त में जाने वाले मुंशीराम ही थे। इस सत्संग ने इनके जीवन को बदलने में जादू का काम किया। इसके पश्चात् इन्होंने वकालत की, और सच्चे केसों के माध्यम से ही अतीव ख्याति प्राप्त की। सम्वत् १९४५ वि. में शतरंज खेलने और हुक्का पीने का व्यसन भी दूर हो गया। सम्वत् १९४६ वि. वैसाखी के दिन अपनी मित्र मण्डली की सहायता से मुंशीराम जी ने 'सद्धर्म प्रचारक' पत्र को जन्म दिया। इस पत्र के द्वारा आर्यसमाज की अपूर्व सेवा की। 'सद्धर्म प्रचारक' स्त्री जाति की शिक्षा और उन्नति का प्रबल समर्थक रहा। इसके परिणामस्वरूप जालन्धर में कन्या महाविद्यालय की स्थापना हुई। सन् १९०१ में उन्होंने अपनी कन्या अमृतकला का विवाह डॉ. सुखदेव जी के साथ जाति के बन्धन को तोड़कर किया। इसमें आपको अपनी बिरादरी का काफी विरोध भी झेलना पड़ा।

हिमालय की घाटियों में मुंशी अमनसिंह जी द्वारा काँगड़ी ग्राम में प्रदत्त भूमि पर २१-२४ मार्च १९०२ को गुरुकुल काँगड़ी का प्रारम्भ हुआ। प्रारम्भ में ही अपने दोनों पुत्र हरिशचन्द्र और इन्द्र को गुरुकुल में प्रविष्ट कर एक उदाहरण प्रस्तुत किया। अपना निजी पुस्तकालय एवं जालन्धर की कोठी गुरुकुल के अधिवेशन में गुरुकुल को भेंट कर दी। यह सब उस हाल में किया जबकि आप पर पच्चीस हजार का ऋण था और आप गुरुकुल से अपने निर्वाह के लिए कुछ भी नहीं लेते थे। सत्रह वर्ष तक गुरुकुल के आचार्य और मुख्याधिष्ठाता रहे। आर्य सार्वदेशिक

सभा के संगठन का श्रेय भी आपको ही जाता है। स्वामी जी के संगठन का उद्देश्य बहुत विस्तृत ही नहीं, पावन भी था। उसमें साम्प्रदायिकता एवं द्वेष की गन्ध तक न थी। उनकी दृष्टि भारत के उज्ज्वल भविष्य की ओर थी। वह भारत को एक अखण्डित और महान शक्तिशाली राष्ट्र बनाने के लिए अपना आन्दोलन चला रहे थे। यह बात समय-समय पर उनके लिखे लेखों को पढ़ने से समझ में आ जाती है। एक अपील में उन्होंने लिखा था कि आर्यसमाज के माने हुए वैदिक सिद्धान्त ऐसे व्यापक और स्वत:सिद्ध हैं कि उनको आचरण में लाना ही उनका प्रचार है। उन्हें वैदिक सिद्धान्तों की शक्ति पर विश्वास है। २३ दिसम्बर १९२६, दिन गुरुवार को स्वामी जी निमोनिया से पीड़ित थे। उनके पास लोगों के आने की मनाही थी। सीढ़ियों पर एक युवक आया तो सेवक ने रोक दिया। स्वामी जी ने आवाज सुनकर उसे बुला लिया। युवक ने पीने के लिये पानी माँगा। सेवक पानी लाने के लिए गया ही था कि उसने पिस्तौल से तीन फायर किए। सेवक धर्मसिंह ने सामना करना चाहा पर उसे भी एक गोली लगी। हत्यारा भागना चाहता था कि स्वामी जी के सेक्रेट्री धर्मपाल विद्यालंकार ने उसे दबोच लिया। पुलिस ने हत्यारे को गिरफ्तार कर लिया। प्रिवी कौंसिल तक मुकदमा चला पर उसकी फाँसी की सजा बहाल रही।

दयानन्द धर्मार्थ चिकित्सालय

परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित ऋषि उद्यान में वर्ष २०१२ से आयुर्वेदिक चिकित्सालय चल रहा है। चिकित्सालय में उपलब्ध सभी औषधियाँ नि:शुल्क दी जाती हैं। डॉ. रमेश मुनि जी चिकित्सक के रूप में इस चिकित्सालय का कुशलतापूर्वक कार्यभार सम्भाल रहे हैं।

दानी महानुभावों से सहयोग की भी अपेक्षा है।

खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर (PAROPKARINI SABHA AJMER)

१. बैंक का नाम-**भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।**

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**10158172715**

IFSC-SBIN0007959

२. बैंक का नाम-**आई.डी.बी.आई**, पावर हाउस के सामने,

जयपुर रोड, अजमेर।

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**091104000057530**

IFSC-IBKL0000091

email : psabhaa@gmail.com

जो विद्वान् लोग परोपकार बुद्धि से विद्या का विस्तार करने, सुगन्धि, पुष्टि, मधुरता रोगनाशक गुणयुक्त पदार्थों का यथायोग्य मेल अग्नि के बीच में उनका होम कर शुद्ध वायु, वर्षा का जल वा ओषधियों का सेवन करके शरीर को आरोग्य करते हैं वे इस संसार में अत्यन्त प्रशंसा के योग्य होते हैं।

- महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.५८

जैसे वेद के वेत्ता विद्वान् लोग वेदानुकूल मार्ग से परमेश्वर को जानकर उत्तम ज्ञान से उसका सेवन करते हैं वैसे ही जगदीश्वर सब को उपासनीय अर्थात् सेवन करने के योग्य है, वैसे ज्ञान के विना ईश्वर की उपासना कभी नहीं हो सकती क्योंकि विज्ञान ही उसकी अवधि है।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.४

महर्षि दयानन्द सरस्वती के जीवन का लक्ष्य
एक भारत–एक वैदिक धर्म

ओमप्रकाश गुप्ता

महर्षि दयानन्द सरस्वती आर्यसमाज की स्थापना कर समाज में एक और नया मत, सम्प्रदाय नहीं चाहते थे, परन्तु वेद प्रचार के लिये एक मंच व उनके अनुयायियों की इच्छा को ध्यान में रखते हुए महर्षि ने चैत्र शुक्ल प्रतिपदा, दिनांक १० अप्रैल १८७५ को बम्बई में प्रथम आर्यसमाज की स्थापना की। महर्षि ने अपने जीवन में संघर्ष ही संघर्ष किया, अनेक बार उनको विष पिलाया गया। उनके संघर्षपूर्ण जीवन का क्या उद्देश्य रहा होगा? उनका कौन-सा कार्य, कौन-सा सपना अधूरा रह गया? यह हम सभी के लिये एक विचारणीय विषय है।

इस विषय पर मेरा विचार निम्नानुसार है –

महर्षि के अपने संघर्षपूर्ण जीवन व आर्यसमाज की स्थापना का लक्ष्य– सम्पूर्ण भारत (आर्यावर्त) को पुनः आध्यात्मिक, सामाजिक, आर्थिक व राजनैतिक स्तर पर एकीकृत करके, समाज में व्याप्त बुराइयों, कुरीतियों को दूर कर एक सुसंस्कृत वैदिक पद्धति के आधार पर स्वराज्य स्थापित करने का रखा था। इसी लक्ष्य को ध्यान में रखते हुए महर्षि ने अपनी कार्यप्रणाली निम्नानुसार समाज में निर्धारित की। समाज में विभिन्न साम्प्रदायिक, सामाजिक व धार्मिक मान्यतायें व्याप्त थीं। ऐसे समाज को किसी एक मत पर सहमत व एकीकृत करना अत्यन्त मुश्किल कार्य था। अतः महर्षि ने आर्य, ओ३म् व वेदों की ओर सबका ध्यान आकर्षित करवाकर एक मत पर सहमत व एकत्रित करने का प्रयास किया। (आर्य, ओ३म् व वेद) इस राष्ट्र के प्राचीनतम राष्ट्रीय धरोहर के रूप में माने जाते हैं। इन पर समस्त भारत का एक मत होने की पूरी-पूरी सम्भावना महर्षि को दिखाई दे रही थी। उक्त तीनों शब्दों की महत्त्वता को इस प्रकार समझना चाहिये।

आर्य– प्राचीन समय में यहाँ के निवासियों को आर्य पुरुष कहकर सम्बोधित किया जाता था। आर्य शब्द श्रेष्ठ व विद्वानों का द्योतक था। महर्षि ने सभी को आर्य पुरुष से सम्बोधित किया।

वेदों की ओर लौटें– यह महर्षि का एक मुख्य विचार व नारा था। समस्त समाज हिन्दू, मुसलमान, सिख, जैन व बौद्ध आदि अनेक धार्मिक सम्प्रदायों में विभक्त था। धार्मिक ग्रन्थों के नाम पर रामचरित मानस, भागवत, महाभारत, शिव पुराण, कुरान, बाइबिल आदि अनेक ग्रन्थ प्रचलित थे, इनमें वेदों के प्रतिकूल व मिथ्या कथन भी हैं। समाज में जादू-टोना, झाड़-फूँक, भ्रमित ज्योतिषीय व भविष्यवाणी आदि अनेक अवैज्ञानिक कुप्रथायें प्रचलित थीं। शूद्रों व स्त्रियों के साथ अमानवीय व्यवहार किया जाता था। इन सबका महर्षि ने पूर्ण शक्ति के साथ विरोध किया तथा सभी को वेदों की ओर लौटने का आह्वान किया। वेदों को सभी सत्य ग्रन्थों का मूल स्रोत बतलाया व तर्कानुसार सिद्ध भी किया। शूद्रों व महिलाओं को भी वेद पढ़ने का अधिकार दिलाया। वेदों का सरल भाषा में सत्य-सत्य भाष्य किया। वैदिक यज्ञ को सभी मनुष्यों का सर्वश्रेष्ठ व प्रथम कर्त्तव्य बतलाया। पुरानी अवैज्ञानिक वेदों के विपरीत मान्यताओं व पण्डितों, मौलवियों आदि के ढोंग का विरोध करने के फलस्वरूप ही महर्षि का जीवन अत्यन्त संघर्षपूर्ण रहा, परन्तु महर्षि अपने लक्ष्य-पूर्ति व सच्चाई पर अडिग रहे। सभी प्रकार की पूजा अर्चनाओं के स्थान पर यज्ञ कर्म को सर्वश्रेष्ठ मान्यता दी।

''**ओ३म्**''-परमात्मा को निराकार, सर्वव्यापक, अजन्मा, अनन्त, अनादि आदि, आदि गुणों सहित सृष्टि का रचयिता माना। परमात्मा के निज नाम ''ओ३म्'' की वैधता को सिद्ध किया। ईश्वर के अवतार लेने की मान्यता को नकारा, क्योंकि ईश्वर अजन्मा व अनादि है।

सत्यार्थ प्रकाश– महर्षि ने महान् ग्रन्थ 'सत्यार्थप्रकाश' की रचना कर समाज का एक सुस्पष्ट व सुव्यवस्थित मार्ग प्रशस्त किया। इस ग्रन्थ के माध्यम से ऋषि ने एक सुसंस्कृत, वैदिक मान्यताओं पर आधारित सामाजिक राष्ट्र निर्माण, प्रजा व राजा के कर्त्तव्य, कर (टैक्स) निर्धारण, शिक्षा-व्यवस्था आदि की सम्पूर्ण व्यवस्था समाज को प्रस्तुत की है।

अन्त में अपने लक्ष्य (एकीकृत भारतवर्ष) को प्राप्त करने व वेदों के प्रचार, पठन-पाठन के उद्देश्य से आर्यसमाज संस्था की स्थापना महर्षि दयानन्द सरस्वती ने की थी। उनके सपनों के विपरीत राष्ट्र के दो विभाजन होने के उपरान्त दिनांक १४-१५ अगस्त १९४७ की मध्य रात्रि को राष्ट्र को राजनैतिक आजादी प्राप्त हुई। विभक्त दोनों राष्ट्र एक-दूसरे के कट्टर दुश्मन हो गये। समाज में समरसता, सच्चा ज्ञान व वैदिक संस्कृति को अभी भी समाज ने नहीं स्वीकारा है। समाज ने देवयज्ञ व वेदों के महत्त्व को नहीं स्वीकारा है। समाज पुनः पुराने आडम्बर, अन्धविश्वास, पाखण्ड, मूर्तिपूजा, फलित ज्योतिष आदि मान्यताओं की ओर बढ़ रहा है।

वर्तमान में समाज को इन सभी अवैज्ञानिक व वेदों के विपरीत मान्यताओं से मुक्ति दिलाने का दायित्व ही आर्यसमाज का मुख्य उद्देश्य होना चाहिये। आर्यसमाज का छठा नियम इसी उद्देश्य को प्रदर्शित करता है। ''संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना। इसी उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए आर्यसमाज की अग्रिम कार्यनीति निर्धारित होनी चाहिये। कुचक्रों के चलते महर्षि दयानन्द सरस्वती जी का निर्वाण अल्प आयु में ही हो गया। महर्षि का जीवन यदि दस वर्ष और होता तो 'एक भारत एक वैदिक धर्म का' उनका लक्ष्य अवश्य प्राप्त हो गया होता। आज भारत समृद्ध राष्ट्रों की श्रेणी में अग्रणी होता। पाकिस्तान, बंगलादेश नहीं बनकर बृहत् भारतवर्ष का आज विश्व में अलग ही वर्चस्व होता।''

अमर हुतात्मा-स्वामी श्रद्धानन्द

पं. नन्दलाल निर्भय

भारत के नर-नारी जागो! आगे कदम बढ़ाओ तुम।
स्वामी श्रद्धानन्द तपस्वी, नेता के गुण गाओ तुम।।

जगत्गुरु ऋषि दयानन्द का प्यारा शिष्य निराला था।
सच्चा ईश्वर विश्वासी था, देशभक्त मतवाला था।।
ताई धर्मवती देवी ने भारी लाड़ लड़ाया था।
नानकचन्द पिता जी ने, अधिवक्ता पुत्र बनाया था।।
जीवन-चरित्र पढ़ो स्वामी का, देशभक्त बन जाओ तुम।
स्वामी श्रद्धानन्द तपस्वी, नेता के गुण गाओ तुम।।

भारत था परतन्त्र, यहाँ था, अंग्रेजों का राज सुनो।
करते थे नित जुल्म विधर्मी, था तब दुःखी समाज सुनो।।
गीत गडरियों के वेदों को, ईसाई बतलाते थे।
भोले-भाले लोगों को, पंजे में दुष्ट फँसाते थे।।
गऊ मांस खाते थे गोरे, समझो अरु समझाओ तुम।
स्वामी श्रद्धानन्द तपस्वी, नेता के गुण गाओ तुम।।

स्वामी श्रद्धानन्द जी ने तब कांगड़ी गुरुकुल खोला था।
पापी अंग्रेजों के सिर पर, मारा बम का गोला था।।
वैदिक शिक्षा जारी की थी, काम बड़ा अनमोला था।
दुष्ट विधर्मी अंग्रेजों का, जिसे देख दिल डोला था।।
महावीर नेता को जानो, वीर बनो यश पाओ तुम।
स्वामी श्रद्धानन्द तपस्वी, नेता के गुण गाओ तुम।।

पुत्र-पुत्रियों के होते भी, धन, दौलत सब दान किया।
तुम्हीं बताओ! किस नेता ने ऐसा कर्म महान् किया।।
रॉलेट ऐक्ट आया भारत में, अपना सीना तान दिया।
संगीनों का किया सामना, स्वामी ने ऐलान किया।।
अंग्रेजों भागो भारत से, हमें न अब बहकाओ तुम।
स्वामी श्रद्धानन्द तपस्वी, नेता के गुण गाओ तुम।।

जो भारतवासी, ईसाई, मुसलमान बन जाते थे।
स्वामी श्रद्धानन्द उन्हें, शुद्धि करके अपनाते थे।
विघ्न और बाधाओं से वे, कभी नहीं घबराते थे।।
जो लेते थे ठान बहादुर, पूरा कर दिखलाते थे।।
देशवासियो! होश करो तुम, काम धर्म के आओ तुम।
स्वामी श्रद्धानन्द तपस्वी, नेता के गुण गाओ तुम।।

स्वामी जी ने मोहनदास गाँधी पर पूरा प्यार किया।
काँगड़ी गुरुकुल के उत्सव पर, उसे महात्मा नाम दिया।।
मोहनदास गाँधी ने उनका, सब ऐहसान भुलाया था।
शुद्धि गलत बताई थी, दुष्टों का साथ निभाया था।।
'नन्दलाल' निर्भय शुद्धि का, फिर से चक्र चलाओ तुम।
स्वामी श्रद्धानन्द तपस्वी, नेता के गुण गाओ तुम।।

अतिथि यज्ञ के होता बनें

महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा आर्य जगत् की एकमात्र ऐसी संस्था है जो सामूहिक सहयोग से ऋषि द्वारा निर्धारित लक्ष्यों की पूर्ति हेतु कृत संकल्प है।

सभा निरंतर प्रगति के पथ पर अग्रसर है। निरंतर अबाध गति से ऋषि उद्यान को आकर्षक एवं जन उपयोगी बनाने हेतु नव निर्माण करा रही है, वेद प्रचार पूरे देश में संचालित कर रही है, वेदों का एवं ऋषि ग्रंथों का प्रकाशन निरंतर जारी है।

प्रातः एवं सायं दैनिक यज्ञ- प्रवचन, वेद-पाठ, उपनिषद्, दर्शनादि शास्त्रों की कथा द्वारा वैदिक धर्म का कार्य नियमित रूप से आश्रम में चलता है। ***गुरुकुल***- आर्ष पद्धति से संचालित गुरुकुल में पढ़ रहे ब्रह्मचारी जो साधना एवं समाज सुधार का लक्ष्य लेकर अध्ययनरत हैं उनकी सभी आवश्यकताओं की पूर्ति निःशुल्क की जाती है। ***अतिथि सेवा***- अतिथियों को यथोचित सुविधा प्रदान करने हेतु सभा पूर्णरूपेण प्रयासरत है एवं सभी सुविधाएँ आवास, प्रातराश, भोजन की व्यवस्था निःशुल्क की जाती है। ***गोशाला***- गोशाला में चालीस के लगभग पशु हैं। इससे अधिक का स्थान नहीं है। आश्रमवासियों को गोशाला में उत्पादित दुग्ध का निःशुल्क वितरण किया जाता है। ***वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम***- वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम में रहकर साधनारत वानप्रस्थियों एवं संन्यासियों की सभी प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति सभा द्वारा निःशुल्क की जाती है। स्वाध्याय एवं साधना की व्यवस्था है। ***विशाल पुस्तकालय***- इसमें दुर्लभ ग्रंथों का संग्रह है, सभा द्वारा शोधकर्ता छात्रों को शोध कार्य हेतु ग्रंथ निःशुल्क प्रदान किए जाते हैं जिनका लाभ स्वाध्यायशील व्यक्ति भी उठा सकते हैं। ***व्यायामशाला***- योग्य शिक्षक द्वारा नगर के युवाओं को ऋषि उद्यान में निःशुल्क व्यायाम प्रशिक्षण दिया जाता है। सभा द्वारा नियुक्त व्यायाम शिक्षक आसपास के गांवों में भी आर्यवीर दल का प्रशिक्षण शिविरों में प्रदान करते हैं।

ये सभी क्रियाकलाप आपके पावन उदार सहयोग से ही संभव हैं। जैसा कि सर्वविदित है कि सभा का आधार ही आकाशीय दानवृत्ति है। आपको प्रतिदिन अतिथि मिलना संभव नहीं फिर अतिथि यज्ञ कैसे किया जाय इसका उपाय है, कुछ राशि प्रतिदिन अतिथि यज्ञ के नाम से निकाल ली जाये और उसको एकत्र कर अतिथि सत्कार में गुरुकुल में भोजन आदि के सहयोग में दे दी जाय।

सभा के धार्मिक क्रियाकलापों एवं आवासीय स्थल ऋषि उद्यान में उपर्युक्त पावन क्रियाकलाप लम्बे समय तक अबाध चलते रहें इसके लिए सभा की योजना है कि प्रतिदिन १० रुपये अथवा प्रतिवर्ष ५ हजार की राशि प्रदान करने वाले उदार यशस्वी दानदाताओं का नाम अतिथि यज्ञ के स्थायी सदस्यों में अंकित किया जाता है ऐसे सज्जनों के नाम का परोपकारी में प्रकाशन भी किया जाता है।

अनेक 'अतिथि यज्ञ के होता' सदस्यों का आग्रह है, निश्चित तिथि जन्मदिन, विवाह वर्षगांठ या विशेष अवसर पर वे अपनी ओर से संस्था में भोजन कराना चाहते हैं। ऐसे महानुभावों से निवेदन है कि वे अतिथि यज्ञ के होता के रूप में एक दिन के भोजन व्यय की राशि लगभग पाँच हजार एक सौ रुपये भेजते हुए इच्छित दिन का विवरण सूचित करेंगे तो उसका उल्लेख आश्रम के सूचना पट्ट पर किया जा सकेगा।

यह अल्प राशि आप दैनिक संचय घट में जमा भी कर सकते हैं, वर्ष में लोग अरबों रुपए आग में पटाखे जलाकर व्यय करते हैं, असावधानी से बिजली जलती छोड़ इसे गंवा देते हैं आदि ऐसी छोटी-छोटी असावधानियों को रोक कर हम उसकी बचत राशि इस पावन कृत्य हेतु सभा को वर्ष में आसानी से दे सकते हैं।

सभा शिविरों के आयोजन द्वारा जन सामान्य को ऋषियों की जीवन प्रणाली सिखा रही है। आप इस योजना में स्थायी सदस्य बनकर ऋषि का संकल्प *संसार का उपकार* की पूर्ति में एक स्तम्भ बनकर सभा को सम्बल प्रदान कर सकते हैं।

यदि अपने सामर्थ्य के अनुसार राशि को न्यूनाधिक करना चाहें तो आपकी स्वतन्त्रता है अधिक से अधिक लोग परोपकारिणी सभा से जुड़ सकें, आप ऐसा करके ऋषि दयानन्द के कार्यों को आगे बढ़ाने में सहायक होंगे इसलिए ऐसी राशि निश्चित की है। आप से प्रार्थना है अपना नाम पता और संकल्प लिखकर अवगत करायें और अतिथि यज्ञ के होता बनें। अपनी राशि प्रतिमाह अथवा सुविधानुसार मनीआर्डर/डीडी/चैक द्वारा अथवा स्वयं उपस्थित होकर कार्यालय में जमा करा सकते हैं। आपका दान ८०जी (आयकर की धारा) के अंतर्गत कर मुक्त होगा।

अतः आपसे निवेदन है कि आप भी अतिथि यज्ञ के होता बनिये। जिन महानुभावों ने हमारा निवेदन स्वीकार कर यज्ञ में अपनी आहुति दी है, उनके नाम यहाँ प्रकाशित किये जा रहे हैं।

अतिथि यज्ञ के होता

(०१ दिसम्बर से १५ दिसम्बर २०१७ तक)

१. श्री देवमुनि, ऋषि उद्यान, अजमेर २. मै. ज़ेनिथ एन्टरप्राइजेज, नई दिल्ली ३. श्रीमती उमा मोंगा, नई दिल्ली ४. श्री प्रवीण माथुर, अजमेर ५. मै. स्वस्तिकॉम चेरिटेबिल ट्रस्ट, अमरावती ६. श्री अवनीश कपूर, नई दिल्ली ७. श्री विष्णु प्रसाद शर्मा, अजमेर ८. श्री सुदर्शन सिंह कोठारी, उदयपुर ९. श्री एच.एम. पाटिल, महाराष्ट्र १०. डॉ. रमेशमुनि, ऋषि उद्यान, अजमेर ११. डॉ. नन्दकिशोर काबरा, ऋषि उद्यान, अजमेर १२. श्री देवेन्द्र सिंह यादव व श्रीमती रेखा यादव, नई दिल्ली १३. श्री लक्ष्मण आर्यमुनि, ऋषि उद्यान, अजमेर १४. श्री उज्ज्वल शर्मा, अजमेर १५. श्रीमती सरला मेहता, ऋषि उद्यान, अजमेर १६. श्रीमती रश्मिप्रभा शास्त्री, लखनऊ १७. स्वामी देवेन्द्रानन्द, ऋषि उद्यान, अजमेर १८. श्री सतीश कुमार व श्रीमती अन्जु चौधरी, मुजफ्फरनगर १९. श्री जोगराम कच्छावा, बालोतरा, बाड़मेर २०. श्री सदाशिव आर्य, उज्जैन २१. श्री रमेश दत्त दीक्षित, बागपत २२. श्रीमती ऋचा शेखर, बैंगलौर २३. श्री दाह्यालाल रामानी, अहमदाबाद २४. श्री कुन्तल शाह, अहमदाबाद २५. श्री धर्मपाल परमार, दिल्ली।

- परोपकारिणी सभा, अजमेर।

गोभक्तों से निवेदन

ऋषि-उद्यान में परमार्थ हेतु गौशाला संचालित है। गौशाला की गौवों के दूध का वितरण सभी गुरुकुलवासियों, संन्यासियों एवं आगन्तुक अतिथियों में निःशुल्क किया जाता है। आप सभी गो-भक्तों एवं उदारमना दानदाताओं से सभा का निवेदन है कि गौवों को उत्तम चारा मिले, इसके लिए जो भी सज्जन चारा दान देना चाहें उनका स्वागत है। यदि आप दूरस्थ प्रदेश के हैं तो कृपया चारे हेतु अनुमानित राशि सभा को ड्राफ्ट/चैक/नगद भेज सकते हैं। यशस्वी दानदाताओं के नाम परोपकारी पत्रिका में प्रकाशित किए जाएँगे। आपका दान गौवों के संवर्धन में सहायक होगा।

ऋषि-उद्यान में संचालित गौशाला के दानदाता

(०१ दिसम्बर से १५ दिसम्बर २०१७ तक)

१. श्रीमती उमा मोंगा, नई दिल्ली २. श्रीमती सावित्री देवी, गुरुग्राम ३. श्री अरुण सत्यदेव व्यास, नागौर ४. श्री वृद्धिचन्द गुप्त, जयपुर ५. सुश्री तुलिका साहू, बिलासपुर ६. श्रीमती कमला देवी पण्डिता, जम्मू ७. श्रीमती अरुणा बागोत्रा, जम्मू ८. श्री महेश तोषनीवाल, अजमेर ९. श्री शिवशान्ति संत असुदाराम आश्रम, लखनऊ १०. श्री साकेत कौशिक, फरीदाबाद ११. डॉ. नन्दकिशोर काबरा, अजमेर १२. श्री सेसाराम, सिरोही १३. श्री लक्ष्मण आर्यमुनि, ऋषि उद्यान, अजमेर १४. श्री साहिल जायसवाल, अलवर १५. श्री संदीप दीक्षित, झज्जर १६. स्वामी देवेन्द्रानन्द, ऋषि उद्यान, अजमेर १७. श्री रणवीर कुमार दुआ, नई दिल्ली १८. श्री शिवकुमार आर्य, नागपुर १९. श्री ओम शंकर, शाहजहाँपुर २०. श्री सदाशिव आर्य, उज्जैन २१. श्री ऋषभ गुप्ता, अम्बाला कैन्ट।

- परोपकारिणी सभा, अजमेर।

मनुष्यों को चाहिये कि अपने पुरुषार्थ से सुवर्ण आदि धन को इकट्ठा कर घोड़े आदि उत्तम पशुओं को रक्खें क्योंकि जब तक इस सामग्री को नहीं रखते तब तक गृहाश्रमरूपी यज्ञ परिपूर्ण नहीं कर सकते इसलिये सदा पुरुषार्थ से गृहाश्रम की उन्नति करते रहें।

- महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.६३

विद्वान् स्त्रियों को योग्य है कि अच्छी परीक्षा किए हुए पदार्थ को जैसे आप खायें वैसे ही अपने पति को भी खिलावें कि जिससे बुद्धि, बल और विद्या की वृद्धि हो और धनादि पदार्थों को भी बढ़ाती रहें।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.४२

स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी
आदर्श संन्यासी, आदर्श आचार्य, आदर्श नेता

राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

श्री पं. निरञ्जन देव जी इतिहास केसरी ने पं. चमूपति जी के निधन पर पहली बार स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज को लाहौर की एक श्मशान भूमि में देखा था। यह जानने का यत्न ही नहीं किया कि यह महात्मा कौन है? वर्षों के पश्चात् उन्हें किसी ने प्रेरणा दी तो वह कुछ बनने के लिए दयानन्द मठ, दीनानगर आये। स्वामी जी के दर्शन करते ही पहचान गये कि यह तो वही महात्मा है जिन्हें कभी लाहौर में देखा था। यह प्रसंग सुनाते हुये वह कहा करते थे कि उनका विशालकाय शरीर ही ऐसा था कि लाखों की भीड़ में अपने भीमकाय शरीर के कारण दूर से पहचाने जाते थे।

वैसे तो मेरे शैशव काल में जब मैं बहुत छोटा था, आप मेरे जन्म स्थान पर प्रचारार्थ गये और अपनी यादें वहाँ छोड़ आये, जो मैं अपने बाल्यकाल में गाँव के आर्यों से सुन-सुनकर झूम उठता था, परन्तु महाराज के दर्शन पहली बार स्यालकोट के आर्यसमाज मन्दिर में यज्ञशाला के पास सीढ़ियों के ऊपर बने आर्यवीर दल के एक बहुत छोटे से कमरे में किये। उन दिनों सिन्ध में सत्यार्थप्रकाश रक्षा-आन्दोलन की आर्यजगत् में बहुत चर्चा थी। मैं सत्याग्रह के बारे आर्यवीर दल में चर्चा छेड़े ही रखता था। आर्यवीर दल के एक बड़े कार्यकर्त्ता ने कहा, ''ऊपर कार्यालय में सर सेनापति पूज्य स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी पधारे हैं। सत्याग्रह के बारे जो पूछना हो, चलो पूछ लो। उस छोटे से कमरे में चार-पाँच आर्यवीर उनके दायें-बायें बैठै वार्तालाप कर रहे थे। उनका चित्र देखता ही रहता था सो दर्शन पाकर गद्गद हो गया। कई बार मेरे प्रेमी विशेष रूप से महाराज के इस प्रथम दर्शन के बारे में मेरे संस्मरण जानने की उत्सुकता दिखाते हैं तो मैं कहा करता हूँ कि कमरे में हम कई जन बैठे हुये थे। मैं स्वामी जी के ठीक सामने बैठा था। ऐसे लगता था कि हम सब तो बैठे हैं, परन्तु स्वामी जी का सिर छत के अति निकट ऐसे था, मानो के वे खड़े हों।''

अब मैं सत्याग्रह की चर्चा छेड़ूँगा, यह सब आर्यवीर सोच रहे थे। उनके तेजस्वी मुखड़े को ही निहारते हुये उनके सन्देश मधुर वचनों को सुनते हुये एक भी प्रश्न न कर पाया। उनके मुखमण्डल से नूर (तेज) बरस रहा था।

ऋषि उद्यान वाले रमेश मुनि जी के जन्म क्षेत्र रोखाँ मण्डी के एक ग्राम में एक महात्मा रहा करते थे। वह स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज के भक्त शिष्य थे। उनको उस ग्राम के नाम पर दूर-दूर तक 'कमालु वाले महात्मा जी' के नाम से ही जाना जाता था। एक बार मेरे एक आर्यबन्धु ने उनसे जाकर कहा, ''जिज्ञासु जी महाराज पर एक बड़ा ग्रन्थ लिख रहे हैं। स्वामी जी क्या थे? कैसे थे? यह आपके शब्दों में उसमें लिखना है।'' बात पूरी होने से पूर्व ही वे उनके भावों को समझ गये। झट से बोल पड़े, ''आर्यसमाज के लोग क्या जानें स्वामी स्वतन्त्रानन्द क्या हैं? यह तो हमीं जानते हैं कि वे कितने बड़े महात्मा, यति, योगी और तपस्वी थे। ये तो यही जानते हैं कि ''जहाँ कहीं लूम्बा (आग) लगे, विपत्ति आये, वहाँ स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी को मोर्चे पर आगे कर दो। बस विजय ही विजय है।''

कमालू वाले महात्मा जी के इस कथन में बहुत कुछ आ गया। बहुत सारे महापुरुषों के इतिहास में यही कुछ हुआ है। स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी एक सुदक्ष, निर्भीक, अजेय, विजयी सेनापति और बलिदानी नेता थे, यह ठीक है, परन्तु वे और भी बहुत कुछ थे। आर्यसमाज में आज उनके सेनापति रूप, बलिदानी रूप की ही विशेष चर्चा होती है। गुणसम्पन्न पूज्य गुरुवर स्वामी जी महाराज यति थे, ब्रह्मचर्य की प्रतिमा थे, योगी थे, महाविद्वान्, गवेषक, इतिहासज्ञ, आदर्श आचार्य, आदर्श मिशनरी, मानव निर्माण कला के शिल्पी, आदर्श तपस्वी, आदर्श नेता, संगठन की कला के आचार्य, विरक्त शिरोमणि और पग-पग पर इतिहास बनाने वाले थे।

पं. नरेन्द्र जी हैदराबाद की वाणी आग उगलती थी। वे निडर थे, बलिदानी थे, उनके मुख्य-मुख्य गुण यही थे, आज उनके बारे में हम लोग यह जानते व प्रचारित करते हैं। वे हैदराबाद के एकमेव क्रान्तिकारी सम्पादक, लेखक भी थे। दूसरे की आग में कूदने वाले, सबकी सेवा करने

वाले, अथक समाज सेवी, संगठनकर्त्ता आदि-ये उनके सब गुण उनकी निर्भीक वाणी के व्यापक व गहरे प्रभाव के तले दब गये।

चलिये, स्वामी जी के अनूप रूप का दिग्दर्शन करवाते हैं। लाहौर में वीर भगतसिंह और उनके साथियों ने कारागार में भूख हड़ताल कर दी। सारा देश हिल गया। तब लाहौर में सब देशप्रेमी इन निडर, देशभक्त क्रान्तिकारियों के समर्थन में एक सभा करना चाहते थे। काँग्रेस के बहुत से लोग भी यही चाहते थे। प्रश्न यह खड़ा हुआ कि सभा का अध्यक्ष कौन हो? सरकार के दमन और गाँधी जी की 'अहिंसा नीति' के डर से कोई काँग्रेसी नेता सभा की अध्यक्षता करने से बचता था।

ऐसी घड़ी में सबको उस सभा के अध्यक्ष पद के लिये एक ही उपयुक्त व्यक्तित्व जँचा और वह थे महाप्रतापी स्वामी श्री स्वतन्त्रानन्द जी महाराज। आपने अध्यक्ष पद से भाषण देते हुये एक वाक्य ऐसा कहा कि सरकार हिल गई। देशवासियों को पहली बार ही स्वराज्य संग्राम से यह नया सन्देश मिला-

''सरकार हमारे इन देशभक्त युवकों से वही व्यवहार करे जो एक सरकार दूसरी सरकार के युद्धबन्दियों से करती है।''

अरे! यह क्या? इस साधु ने तो इन हिंसक युवकों को विरोधी सरकार के युद्धबन्दी सैनिक घोषित कर दिया है।

अगला रविवार आया। स्वामी जी आर्यसमाज के सत्संग में ताँगे पर बैठकर जा रहे थे। पुलिस आर्यसमाज जाने वाले मार्ग पर खड़ी थी। ताँगे को रोककर महाराज जी से कहा, उतरो नीचे। वारण्ट दिखाये और कहा- आप गिरफ्तार हैं। हथकड़ी आगे कर दी। स्वामी जी ने दोनों हाथ आगे कर दिये। हाथी की सूण्ड के समान यतिराट् की भुजाओं को हथकड़ी छोटी पड़ गई। दो हथकड़ियों को मिलाकर हथकड़ी पहनाई गई। यह अपने आप में एक नई और पहली घटना थी। क्या आर्यसमाज ने अपने महान् नेता की स्वराज्य संग्राम की इस अद्वितीय घटना को कभी मुखरित किया?

यह सारा प्रसंग क्या दें। संक्षेप से बताये देते हैं। जज, जिसके सामने केस था वह एक देशभक्त सिख सज्जन था। उसकी पत्नी भी बड़ी धर्मात्मा और देशभक्त थी। वह अपने पति को कहती रहती कि यह संन्यासी महात्मा देशभक्ति का उपराधी है। सारे देश के लिये, वीर सपूतों के लिये दु:ख झेल रहा है। हम बाल-बच्चे वाले हैं। हर पेशी पर पति को यही कहती कि स्वामी जी को दण्ड नहीं देना। हमें पाप लगेगा।

महाराज पर गवर्नर की हत्या का षड्यन्त्र रचने का भी भयङ्कर दोष लगाया गया। किसी साधु पर इससे पहले कभी यह दोष नहीं लगाया गया था। आर्यो! इस इतिहास की चर्चा कौन करेगा?

कभी किसी आर्यसमाजी लेखक ने, वक्ता ने चर्चा नहीं चलाई कि स्वामी जी अपने समय के एक यशस्वी इतिहासकार थे। प्रो. जयचन्द्र जी विद्यालङ्कार अपने समय के प्रख्यात इतिहासकार थे। जब कभी इतिहास विषय की कोई समस्या होती, वह स्वामी जी से अपनी उलझन सुलझाने को कहा करते। उनके एक प्रश्न या उलझन का समाधान करते हुये लिखा गया दुर्लभ लेख मैंने सम्भाल कर रखा है। मैं इसे शीघ्र अनिल आर्य जी देवनगर, हरियाणा को सौंप दूँगा। स्कूल, कॉलेजों व गुरुकुलों की डींगें मारने वाले आर्यसमाज में ऐसे दो-चार लेख किसी ने सुरक्षित किये क्या? यहाँ यह बताना भी अप्रासंगिक नहीं होगा कि जब लम्बे समय तक गुरुद्वारा सिग्रेट केस के झूठे केस में नेहर की काँग्रेस सरकार मेरे विरुद्ध F.I.R. (प्राथमिकी) ही पेश न कर सकी तो श्री जयचन्द्र जी ने ही अपने प्रभाव से यह केस हटवाया। उन्हें इस बात से बहुत दु:ख हुआ कि ''हमारे स्वामी जी के एक निर्दोष चेले को सताया जा रहा है। आपने सन्देश भिजवाकर मुझे मिलने के लिये बुलाया भी।''

भारत छोड़ो आन्दोलन में सेना में विद्रोह फैलाने का षड्यन्त्र रचने पर देश में पहली बार किसी साधु पर यह भयङ्कर केस चलाया गया तो वह यही आर्य संन्यासी यति योगी था। देश के लिये मुनि महात्मा ने आग में कूदकर देश का, आर्यसमाज का सिर ऊँचा कर दिया। कहानी तो बड़ी लम्बी है। बस सार ही दिया जाता है।

स्वामी जी प्रचार यात्रा पर थे। पीछे दीनानगर वारण्ट पहुँच गये। स्वामी जी जब मठ लौटे तो मुसलमान थानेदार खाँ साहब आपको पकड़ना नहीं चाहते थे। उन्होंने मठ में

आकर कहा- ''स्वामी जी, आप कहीं चले जायें। भेष बदलकर भूमिगत हो जायें। मैं लिख दूँगा कि मैं तो गया, वे नहीं मिले।''

आपने दृढ़तापूर्वक कहा, ''नहीं भागने, लुकने-छुपने का प्रश्न ही नहीं उठता। जेल जाना ही श्रेयस्कर है।''

मृत्युञ्जय स्वामी स्वतन्त्रानन्द से ऐसी आशा नहीं की जा सकती थी कि वे भेष बदलकर गिरफ्तारी से बचना चाहेंगे। स्त्री का भेष हो अथवा पुरुष का वेश उनको ऐसा सुझाव कोई दे ही नहीं सकता था और न वे ऐसी बातें कतई सुन सकते थे। थानेदार मुहम्मद अमीर खाँ अगले दिन मठ पहुँचे। स्वामी जी को बन्दी बना लिया गया। देशभर की जनता को पता भी न लगने दिया गया कि उन्हें शाही किला लाहौर में एक cell (कोठरी) में रखा गया। उसमें कभी सूर्य की किरण भी नहीं घुस सकती थी। उन्होंने न जेल के वस्त्र पहने और न ही बिस्तर लिया। Interrogation (पूछताछ-जाँच) की यातनाओं का वीरतापूर्वक सामना किया।

अजमेर में परोपकारिणी सभा की एक बैठक में आये। होली के दिन सभा कार्यालय जा रहे थे। कुछ शरारती लड़कों ने पूज्य स्वामी जी पर रंग फेंक दिया। आपने साथ जा रहे सभा के न्यासी श्री घीसूलाल जी को अविलम्ब लौटने को कहा। कारण? आप संन्यासी के वस्त्र पर किसी दाग़ को देख नहीं सकते थे। साधु और दाग़। ये दो परस्पर विरोधी हैं। न चोले पर दाग़ सह सकते थे और न आचरण पर दाग़ को कभी लगने दिया। मर्यादाओं का कड़ाई से जीवन भर पालन करते रहे। यही उनका बड़प्पन था। धन संग्रह (परोपकार के लिये भी) के लिये कभी हाथ नहीं फैलाया।

सत्यनिष्ठ ऐसे कि प्रिंसिपल जावेद जी को तथा इस सेवक को ऋषि जीवन की खोज का एक कार्य सौंपा, परन्तु साथ यह कड़ा निर्देश, उपदेश दिया कि जो कुछ लिखो वह सप्रमाण हो। कुछ भी अप्रामाणिक न हो।

०१ से १५ दिसम्बर २०१७

संस्था-समाचार

जन्मदिवस पर यज्ञ- ऋषि उद्यान की विशाल यज्ञशाला में ०७ दिसम्बर को श्री प्रणव माथुर सुपुत्र डॉ. प्रवीण माथुर महर्षि दयानन्द सरस्वती विश्वविद्यालय अजमेर के जन्मदिन पर यज्ञ किया गया। इस अवसर पर स्वामी विष्वङ् जी, गुरुकुल के अन्य आचार्यों, संन्यासियों, वानप्रस्थियों, साधकों ने आशीर्वाद प्रदान किया। श्री प्रणव जी को परोपकारिणी सभा की ओर से जन्मदिवस की हार्दिक शुभकामनाएं।

अतिथि- अजमेर नगर में केसरगंज स्थित ऐतिहासिक महर्षि दयानन्द आश्रम, अनुसन्धान भवन एवं पुस्तकालय, ऋषि निर्वाण स्थल-भिनाय कोठी, ऋषि उद्यान में महर्षि दयानन्द सरस्वती संग्रहालय देखने, संन्यासियों-विद्वानों से मिलकर शंका समाधान करने, दैनिक यज्ञ एवं प्रवचन से लाभ लेने, पुष्कर आदि पर्यटन स्थलों में भ्रमण एवं प्रचार के लिए देश-विदेश के संन्यासी, वानप्रस्थी, विद्वान्, ब्रह्चारी, आर्यवीर, आर्यसमाज के कार्यकर्त्ता, गृहस्थ स्त्री-पुरुष, बच्चे निरन्तर आते रहते हैं। पिछले १५ दिनों में अलवर, भिण्ड, नीमच, मेरठ, राजकोट, जयपुर, भरतपुर, जीन्द, द्वारिका, देहरादून, दिल्ली, गुड़गांव, इलाहाबाद, हिसार से ३६ अतिथिगण ऋषि उद्यान पधारे।

दैनिक प्रवचन- प्रतिदिन प्रातःकालीन प्रवचन में **स्वामी विष्वङ् जी** ने संयम, ब्रह्मचर्य की महिमा, परिग्रह के दोष, धन की अशुद्धि से आध्यात्मिक उन्नति में बाधा, तीर्थयात्राओं द्वारा तन-मन की शुद्धि, संतोष से सुख आदि विषयों पर प्रवचन दिया।

सायंकालीन प्रवचन में सोमवार से शुक्रवार तक उपाचार्य सत्येन्द्र जी ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका पुस्तक पर चर्चा एवं शंका समाधान करते हैं।

शनिवार सायंकालीन प्रवचन में श्री मुमुक्षु मुनि जी ने कहा कि दृढ़ संकल्प से ही सफलता प्राप्त होती है। । श्री बलेश्वर मुनि ने मन की शक्ति के बारे में बताया।

रविवारीय प्रातःकालीन सत्संग में आर्ष गुरुकुल ऋषि उद्यान के ब्रह्मचारी दिलीप जी ने भजन सुनाया। सायंकालीन प्रवचन में ब्र. रोशन जी ने अच्छे मित्रों के गुण बताये। ब्र. तीर्थराम जी ने अग्नि के स्वरूप विषय पर प्रवचन दिया।

प्राचीन भारत में विद्यालय की अवधारणा

सुनील वेदश्रवा, ब्यावर

स्वामी व्रतानन्द जी श्री गुरुकुल चित्तौड़गढ़ के संस्थापक, स्वामी श्रद्धानन्द के शिष्य ने अखण्ड ब्रह्मचर्य का व्रत लेकर गुरुकुल काँगड़ी से विद्यालङ्कार स्नातक होकर ऋषि दयानन्द के सपने को साकार करने के लिये ब्रह्मचर्य से सीधा संन्यास लेकर चित्तौड़गढ़ में गुरुकुल खोला। आपको **''ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युमपाघ्नत, इन्द्रो ह ब्रह्मचर्येण देवेभ्यः स्वराभरत्''** मन्त्र इतना प्रिय था कि लौह पट्टिका बनवाकर वर्णलेखक से उस पर यह मन्त्र लिखवा रखा था और आश्रम संख्या दो में यह भित्ती पर अवलम्बित थीं। लगभग हम सभी ब्रह्मचारियों ने इसे देख-देख बिना प्रयास स्मरण कर लिया था। इसके अतिरिक्त दो और मन्त्र द्रष्टव्य हैं **''ब्रह्मचर्येण तपसा राजा राष्ट्रं विरक्षति, आचार्यो ब्रह्मचर्येण ब्रह्मचारिणमिच्छते।''** एवं **''आचार्यो ब्रह्मचारी ब्रह्मचारी प्रजापतिः, प्रजापतिर्विराजति विराडिन्द्रो भवद्वशी।''** इन मन्त्रों से स्पष्ट होता है कि वैदिक काल में पढ़ने वाला ब्रह्मचारी और पढ़ाने वाला आचार्य होता है।

आचार्य- आचार्य कौन होता है? **''य आचारं ग्राह्यति''** जो आचारों सदाचारों को शिष्यों में धारण करवाता है वह आचार्य कहलाता है, मनुस्मृति में जो वेदों का विद्वान् हो उसे आचार्य कहते हैं। उपाध्याय-जो आजीविका लेकर पढ़ाता है, उसे उपाध्याय कहा गया है। **उपनीयं तु यः शिष्यं वेदमध्यापयेद् द्विजः, संकल्पं सरहस्यं च तमाचार्यं प्रचक्षते।**

ब्रह्मचारी- 'बृह' धातु का अर्थ बड़ा होता है, महान् होता है। जो महानता में विचरण करता है, ब्रह्म का अर्थ सबसे बड़ा है, इसीलिये ईश्वर को भी ब्रह्म कहते हैं। ब्रह्म का अर्थ वेद भी है, ज्ञान भी है। **सर्वेषामेव दानानां ब्रह्मदानं विशिष्यते**-सभी दानों में ज्ञान का दान (वेद के ज्ञान का दान) सबसे विशेष कहा गया है, वारि, गो, अन्न, मही, वासस् (कपड़ा) तिल, काञ्चन और सर्पिष् से भी अधिक। मन्त्र में ''आचार्यों ब्रह्मचारी'' जो कहा गया है इसका अर्थ ही आचार्य वेदों का विद्वान् है और वेदों का विद्वान् ही प्रजापति, प्रजा अर्थात् सन्तान या शिष्यों का स्वामी होता है और इस तरह का आचार्य वेदों का विद्वान् प्रजापति विशेष रूप से सुशोभित होता है, जिसने कि अपनी इन्द्रियों को अपने वश में कर रखा हो।

द्विज ब्रह्मचारी- पक्षियों के पहले अण्डा होता है, कुछ समय पश्चात् अण्डों से बच्चे निकलते हैं, किन्तु बालक पहले माता-पिता के गर्भ में रहता है, उसके पश्चात् आचार्य के गर्भ में अर्थात् गुरुकुल में, इससे वह द्विजन्मा कहलाता है, द्विजन्मा अर्थात् द्विज। **''आचार्य उपनयमानो ब्रह्मचारिणं कृणुते गर्भमन्तः, तं रात्रिस्तिस्त्र उदरे बिभर्ति तं जातं द्रष्टुमभिसंयन्ति देवाः।।''** आचार्य ब्रह्मचारी को अपने गर्भ में विद्या देने के लिये रख लेता है। तीन रात्रि उदर में रखकर विद्यादि से पूर्ण विद्वान् बनाता है।

गुरुकुल- **''उपह्वरे गिरीणां संगमे च नदीनां धिया विप्रो अजायत''** पर्वतों की उपत्यका में या नदियों के संगम पर प्रखर मेधावी उत्पन्न होते हैं। गुरुकुल प्रकृति की गोद में ही होने चाहिये, क्योंकि प्रकृति के निकट रहकर ही प्रकृति से भी सीखता है और आचार्य से भी सीखता है और दोनों के संगम से ही मेधावी बनता है, किन्तु पंचतन्त्र में एक श्लोक आया है **''धनिको श्रोत्रियो राजा नदी वैद्यस्तु पंचम''** किसी भी ग्राम या नगर में ये पाँच तो होने ही चाहिये। भारत के ग्रामों में पहले यह व्यवस्था थी कि ग्रामवासी किसी एक श्रोत्रिय (ब्राह्मण) (वेद का विद्वान्) को अपने ग्राम में बुलाकर बसाते थे। जिससे कि उनका ग्राम शिक्षित बना रहे। मनुस्मृति में कहा है यदि वह वेद का विद्वान् नहीं हो तो जहाँ तक वह जानता है वहाँ तक ब्रह्मचारी पढ़कर किसी वेद के विद्वान् से पढ़े, जहाँ कहीं भी वह रहता हो।

गुरुकुल भेजने का समय- उपनयन संस्कार वैदिक काल में आचार्यों और गुरुओं के सान्निध्य में ही होते थे। अतः यह समय ही गुरुकुल में भेजने का समय है। ब्राह्मण का बालक आठवें वर्ष में, क्षत्रिय का ग्यारहवें वर्ष में, वैश्य का बारहवें वर्ष में गुरुकुल में भेज दें, न्यून से न्यून ब्राह्मण बालक का पाँचवें वर्ष, क्षत्रिय बालक का छठे वर्ष, वैश्य बालक का उपनयन आठवें वर्ष तक हो जाये, अधिक से अधिक ब्राह्मण बालक सोलह वर्ष से पूर्व, क्षत्रिय बालक का बाइस से पूर्व, वैश्य बालक का चौबीस वर्ष से पूर्व उपनयन हो।

छान्दोग्य उपनिषद् में सत्यकाम जाबाल की कथा आती है जो कि ऐतिहासिक बताई गयी है। सत्यकाम अपनी माता से कहता है कि मैं आठ वर्ष का हो गया हूँ और गुरुकुल जाना चाहता हूँ। जननि, आप मेरा गोत्र बताएँ। सत्यकाम की जननी कहती है-मैंने यौवन में सेवकी रहते हुए अनेक घरों में सेवा की है और उसी काल में तू उत्पन्न हुआ, अतः मैं तेरे पिता का गोत्र बता नहीं सकती। गुरु तुझसे यह पूछें कि तू कौन है, तेरा गोत्र

क्या है तो कह देना, मेरी माता का नाम जाबाली है और मेरा नाम सत्यकाम जाबाल है। महर्षि हारित अपने आश्रम में उस अष्टवर्षीय बालक से नाम और गोत्र पूछते हैं तो वह सत्य-सत्य उसी बात को दोहरा देता है कि मेरी माता अनेक पुरुषों की सेवा करते हुए, सेवकी रहते हुए मैं उत्पन्न हुआ अत: मेरे गोत्र का पता नहीं है, माता ने कहा तू जाबाली का पुत्र है और तू अपना नाम और गोत्र सत्यकाम जाबाल बता देना। महर्षि हारित उस बालक की सत्यप्रियता से प्रभावित होकर उसे समित्पाणि होकर सामने आने का आदेश देते हैं। अर्थात् शिष्य रूप में स्वीकार कर लेते हैं।

इस कथा को देखकर ऐसा लगता है, वैदिक युग में ब्राह्मण बालक, क्षत्रिय बालक या वैश्य बालक जैसी कोई बात नहीं थी।

गुरुकुल में अध्ययन काल- पढ़ने का समय कितना हो इसका काल दो स्थानों पर दिखाई देता है, पहला ब्रह्मचर्य सूत्र में- **''द्वादशवर्षाणि प्रतिवेदं ब्रह्मचर्यं गृहाण वा ब्रह्मचर्यं चर''**, बारह वर्ष तक एक वेद पढ़ता हुआ ब्रह्मचर्य का पालन करे या अड़तालीस वर्ष तक चारों वेद पढ़े। दूसरा मनुस्मृति में- **''षट्त्रिंशदाब्दिकं गुरौ त्रैवैदिकं व्रतम्, तदर्धिकं पादिकं वा गृह्णान्तिकमेव वा।''** इस श्लोक के अनुसार छत्तीस वर्ष इसका आधा अट्ठारह वर्ष अथवा छत्तीस का चौथाई नौ वर्ष तक गुरुकुल में रहते हुए चारों अथवा एक या दो या तीन वेद पढ़े या गुरु या आचार्य जब देखें कि ब्रह्मचारी स्नातक बनने के योग्य हो गया है तो कभी भी उसका समावर्तन कर दिया जाता है। श्लोक के भाव को साधारण शब्दों में यूँ समझा जा सकता है ८+९=१७ वर्ष तक, ८+१८=२६ वर्ष तक ८+३६=४४ वर्ष तक अध्ययनकाल योग्यतानुसार हो सकता है।

आचार्य और ब्रह्मचारी के सम्बन्ध- उपनयन के समय आचार्य ब्रह्मचारी से प्रतिज्ञा करता है **''ममव्रते ते हृदयं दधामि, मम चित्तमनुचित्तं ते अस्तु''** बालक अपने माता-पिता के परिवार को छोड़कर आचार्य के गर्भ में प्रवेश करता है अर्थात् छोटे-परिवार से बड़े परिवार में प्रवेश लेता है तो आचार्य उस बालक को कहता है कि मैं तेरे हृदय को धारण करता हूँ और मेरा चित्त तेरे चित्त के अनुकूल होवे अर्थात् जैसे माता-पिता तुझे तेरे घर में रखते हैं उसी प्रकार मैं तुझे अपने गुरुकुल में रखूँगा। जैसे तू अपने माता-पिता की आज्ञा मानता था उसी प्रकार **''मम वाचमेकव्रतोजुषस्व''** मेरी बात को एकव्रती होकर प्रीतिपूर्वक सेवन करना और यहाँ के शैक्षणिक वातावरण में तू वेदों का विद्वान् बन सकेगा।

गुरुकुल में दण्ड विधान- **''सामृतैः पाणिभिर्घ्नन्ति गुरवो न विषोक्षितैः, लालनाश्रयिणो दोषास्ताड़नाश्रयिणो- गुणाः।''** भगवान् मनु ने साफ कहा है कि माता-पिता व गुरुजन, ब्रह्मचारी या शिष्य को मारें तो अमृत भरे हाथों से मारें, न कि विषभरे हाथों से अर्थात् ईर्ष्या, द्वेष और क्रोध से नहीं। ताड़न से यदि दोष नष्ट होकर गुण बढ़ेंगे, तभी ताड़न का आश्रय लेवें अन्यथा ब्रह्मचारियों से स्नेहासिक्त रहे या स्नेह से उच्छृंखल हो रहा हो तब ताड़न करे।

चरित्र एवं जितेन्द्रियता- गुरुकुल में चरित्र एवं जितेन्द्रियता पर जोर दिया जाता है। **''एकः शयीत सर्वत्र न रेतः स्कन्दयेत् क्वचित्''** अकेला सोये और ऊर्ध्वरेत बने। **''वर्जयेन्मधु मांस च गन्धं माल्यं रसान् स्त्रियः, शुक्तानि यानि सर्वाणि प्राणीनां चैव हिंसनम्।''** शराब, मांस, गन्ध, माला, रस, स्त्रियाँ और भोजन में खटाई, तिक्तता इत्यादि से दूर रहे। **''अभ्यङ्गमञ्जनं चाक्ष्णोरुपानध्छत्रधारणम्, कामं क्रोधं च लोभं च नर्त्तनं गीतवादनम्।''** मालिश, आँखों में काजल लगाना, छत्र धारण करना, काम, क्रोध, लोभ, नाचना और गाना इनसे दूर रहे। **''द्यूतं च जनवादं च परिवादं तथानृतम्, स्त्रीणां प्रेक्षणालम्भमुपघातं परस्य च।''** जुआ, व्यर्थ की बातें, निन्दाओं, झूठ, स्त्रियों की ओर ताकना, छेड़ना, दूसरों से झगड़ा इत्यादि से दूर रहें। **''इन्द्रियाणां विचरतां विषयेष्वपहारिषु संयमे यत्नमातिष्ठेत् विद्वान् यन्तेव वाजिनाम्।''** जैसे अच्छा ताँगा चलाने वाला घोड़ों को वश में रखता है ऐसे ही जितेन्द्रिय ब्रह्मचारी अपहारी विषयों में इन्द्रियों को जाने से यत्नपूर्वक रोके।

वैदिककालीन शिक्षा का उद्देश्य- जितेन्द्रिय विद्वान्, जितेन्द्रिय सैनिक और अच्छा व्यापारी बनाना तत्कालीन शिक्षा का उद्देश्य था, जैसा कि हमारी वैदिक प्रार्थना के मन्त्र में भाव है, **''आब्रह्मन् ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायताम्, आ राष्ट्रे राजन्यः शूर इषव्योऽतिव्याधि महारथो जायताम्...''''ब्रह्मचर्येण तपसा राजा राष्ट्रं विरक्षति...''** सबसे अच्छी जानकारी (ज्ञान) और तप के द्वारा या यूँ कहना चाहिये तपःपूर्वक जो सबसे अच्छा ज्ञान प्राप्त किया है उससे राजा राष्ट्र की विशेष रक्षा करता है। **''मा वस्तेन ईशत''** कोई चोर, डाकू, लुटेरा तुम पर शासन न करे अपितु जितेन्द्रिय राजा ही तुम पर शासन करे। **''विषयेष्वप्रसक्तिश्च''** विषयों में अप्रसक्ति वाले क्षत्रिय बनाना ही वैदिक शिक्षाओं का प्रयोजन था और है। व्यापार के लिये अथर्ववेद में मन्त्र है **''येन धनेन प्रपणं चरामि, धनेन देवा**

धनमिच्छमानः'' जिस धन से मैं व्यापार कर रहा हूँ उस धन से और अधिक धन की इच्छा करने वाला होऊँ। ''**तन्मे भूयो भवतु मा कनीयो**'' वह धन और बढ़े, कम नहीं हो। ''**अग्ने सातघ्नो देवान् हविषा निषेध**'' हानि पहुँचाने वाले तत्त्व दूर हों या मैं उनको पहचान कर दूर कर दूँ। ''**शूद्रो ब्राह्मणतामेति ब्राह्मणश्चैति शूद्रताम्, क्षत्रियाज्जातमेवन्तु विद्यात्वैश्यात्तथैव च**'' इसमें सीधा सन्देश है कि पढ़ोगे लिखोगे तो ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य अपनी रुचि के अनुसार बन जाओगे, नहीं तो शूद्र रह जाओगे।

दूसरा प्रयोजन- ''**विद्यां चाविद्यां च यस्तद्वेदोभयं सह, अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्ययामृतमश्नुते**'' अर्थात् अविद्या को जानकर मृत्यु को तर जाता है और विद्या को जानकर अमृत को प्राप्त कर लेता है। विद्या का दूसरा प्रयोजन दुखों से छुटकारा है, मोक्ष प्राप्ति है।

वेदों में बालमनोविज्ञान- वैसे तो उपनिषदों में यम-नचिकेता इत्यादि बहुत सी बाल कथाएँ मिल जाती हैं। ऐसे ही वेदों में अनेक मन्त्र ऐसे हैं जैसे ''**न द्वितीयो न तृतीयश्चतुर्थो नाप्युच्यते न पञ्चमो न षष्ठस्सप्तमो नाप्युच्यते, न अष्टमो न नवमो दशमो नाप्युच्यते, य एतं देवमेकवृतं वेद।**'' यहाँ ब्रह्मचारी पूरणी संख्या भी सीख लेता है और यह सिद्धान्त भी समझ लेता है कि ईश्वर एक है। ऐसे ही ''**तदेवाग्निस्तदादित्यस्तद्वायुस्तदुचन्द्रमा, तदेव शुक्रं तद् ब्रह्म ता आपः सः प्रजापतिः।**'' इसके द्वारा भौतिक पदार्थों के नाम भी समझ लेता है और यह भी जान लेता है कि एक ही परमात्मा के अनेक नाम हैं। ऐसे ही ''**एका च मे तिस्रश्च में तिस्रश्च मे पञ्च च मे पञ्च च मे सप्त च मे सप्त च मे नव च मे...।**'' एक में एक और एक जोड़ने से सात, गुरुकुलों में बाल बटुओं को खेल-खेल में ही संख्या सिखा दी जाती थी। ''**उलूकयातुं शुशुलूकयातुं जहि श्वयातुमुतकोकयातुम्, सुपर्णयातुमुतगृध्रयातुं दृषदेव प्र मृण रक्ष इन्द्र**'' इस मन्त्र में पशु-पक्षियों के नाम के साथ काम, क्रोध, लोभ, मोह, ईर्ष्या और द्वेष से दूर रहना भी सिखाया जाता है। (उल्लू, भेड़िया, कुत्ता, कौआ, गरुड़ और गिद्ध) ''**व्रीहयश्च मे यवाश्च मे माशाश्च में तिलाश्च में...**'' इस मन्त्र से बारह खाद्य वस्तुओं के नाम सीख लेता है और ये किस प्रकार जीवनरक्षक हैं, आयुवर्धक हैं, इनसे सङ्गतिकरण बनाना जान लेता है।

प्राचीन काल से ही प्रश्नोत्तर आचार्य और ब्रह्मचारी के मध्य शैक्षिक परम्परा रही है।

वेदों में प्रश्नोत्तरी- यजुर्वेद और अथर्ववेद में प्रश्नोत्तरी के मन्त्र मिलते हैं जैसे ''**कस्स्विदेकाकी चरति कऽउस्विज्जायते पुनः किंस्विद्धिमस्य भेषजं किम्वावपनं महत्।**'' कौन अकेला चलता है? कौन पुनः-पुनः उत्पन्न होता है? हिम की औषधि क्या है? बोना कहाँ होता है? उत्तर है ''**सूर्य एकाकी चरति, चन्द्रमा जायते पुनः, अग्निर्हिमस्य भेषजं, भूमिरावपनं महत्।**'' सूर्य अकेला चलता है, चन्द्रमा पुनः उत्पन्न होता है अर्थात् घटता-बढ़ता रहता है, शैत्य की औषधि अग्नि है, बोना भूमि पर होता है। '' **केन श्रोत्रियमाप्नोति केनेमं परमेष्ठिनम्, केनेममग्निं पुरुषः, केन सम्वत्सरं ममे।**'' किसके द्वारा विद्वत्ता को प्राप्त करता है? और किससे चारों वेदों को? किससे इस अग्नि को और किसके द्वारा सम्वत्सर को? उत्तर है ''**ब्रह्मश्रोत्रियमाप्नोति, ब्रह्मेमं परमेष्ठिनम्, ब्रह्मेममग्निं पुरुषो ब्रह्म सम्वत्सरं ममे।**'' ज्ञान के द्वारा ही विद्वत्ता को प्राप्त करता है। ज्ञान के द्वारा ही चारों वेदों को, ज्ञान से ही अग्नि (के विभिन्न स्वरूपों को), ज्ञान से ही वर्ष का माप जानता है। ऐसे ही पुरुषसूक्त में भी-**मुखं किमस्य किं बाहू किमूरू पादा उच्येते?** उत्तर है ''**ब्राह्मणोस्य मुखमासीद् बाहू राजन्यः कृतः उरू तदस्य यद् वैश्यः पद्भ्यां शूद्रोऽजायत।**'' वेदों में प्रश्नोत्तरी के माध्यम से यह बताना आवश्यक है कि विद्यार्थी के लिये प्रश्न का कितना महत्त्व है। जो शिष्य जितने अधिक प्रश्न करता है उसकी जिज्ञासा उतनी बड़ी है। ''**अविज्ञातं प्रवचनं प्रश्न इत्यभिधीयते।**''

वैदिक काल में शिक्षा की विधियाँ- उस काल में जो सीखने सिखाने की विधियाँ या स्मरण कराने की जो विधियाँ मिलती हैं वे आज तक चली आ रही हैं।

१. आवृत्ति के माध्यम से- आवृत्ति से तात्पर्य घोकना, रटना, जपना, बार-बार दोहराना है। इसी माध्यम से श्रुतियों को स्मरण किया जाता है। मन्त्र, श्लोक या सूत्र इसी माध्यम से स्मरण किये जाते हैं, किन्तु वेद मन्त्रों को स्मरण करने की अन्य विधियाँ यथा जटा पाठ, घन पाठ, शिखा पाठ, माला पाठ, ध्वज पाठ इत्यादि कुल दस हैं।

२. चतुर्भिः प्रकारैर्विद्योपयुक्ता भवति- आगम कालेन स्वाध्याय कालेन प्रवचनकालेन व्यवहारकालेनेति। आगम का अर्थ सीखना होता है अर्थात् गुरु के मुख से सुनना पूरा ध्यान लगाकर, **स्वाध्यायकाल**-जो कुछ गुरु के मुख से सुना उसको पुनः पढ़ना जब तक हृदयङ्गम न हो जावे, **प्रवचनकाल**- उस विषय पर अधिकारपूर्वक कहने की योग्यता प्राप्त हो जाना, फिर है **व्यवहारकाल**- जो सुना, पढ़ा, भलीभाँति कहा, उसे व्यवहार

में लाना। इसी प्रकार–

३. श्रवण, मनन, निदिध्यासन और साक्षात्कार– श्रवण में गुरु से सुने या पढ़े, सुनकर या पढ़कर अर्थ के बारे में विचार ही मनन है। उसे करे, उस पढ़े हुए या सुने हुए का बारम्बार ध्यान करना **निदिध्यासन** है, अन्त में उस अर्थ का साक्षात्कार करे, जैसे बटन दबाने से टेप किया हुआ गाना या भाषण चालू हो जाता है, उसी प्रकार **साक्षात्कार** है। इस बटन को दबाते ही निदिध्यास किया हुआ अर्थ या विषय सामने प्रस्तुत हो जाता है।

४. विद्या गोष्ठी– इस तरह की गोष्ठियाँ किसी विषय का सार जानने के लिये अथवा अपने-अपने विचार प्रस्तुत करने के लिये या किसी अर्थवेत्ता विषयज्ञ की बात सुनने के लिये होती हैं। इसमें कई पण्डित मिलकर अपने से बड़े विद्वान् की बात सुनते हैं। छान्दोग्य उपनिषद् में ऐसा उदाहरण मिलता है– उपमन्यु का पुत्र प्राचीनशाल, पुलुष का पुत्र सत्ययज्ञ, मल्लव का पुत्र इन्द्रद्युम्न, शर्कराक्ष का पुत्र जन और अश्वतराश्वि का पुत्र बुडिल ये पाँचों महाशाल हैं, महाश्रोत्रिय हैं। महाशाल से तात्पर्य जिनकी शाला में असंख्य छात्र पढ़ते हैं। श्रोत्रिय वेदों के विद्वान् को कहते हैं। ये पाँचों ब्रह्मज्ञानी और आत्मतत्त्ववेत्ता हैं। एक दिन ये पाँचों विचार करते हैं कि हमसे अच्छे वर्तमान में अरुण पुत्र उद्दालक हैं। हमें उद्दालक के पास चलना चाहिये। ये पाँचों उद्दालक के पास जाते हैं और उद्दालक इन्हें दूर से देखते ही समझ जाते हैं कि ये आत्मरूप वैश्वानर को जानने आये हैं और मैं इनके प्रश्नों का समाधान नहीं कर सकूँगा। अत: उद्दालक उन्हें कहते हैं कि मैं जानता हूँ आप आत्मरूप वैश्वानर को मुझसे जानने आये हैं, किन्तु मुझसे अच्छे इस समय केकय के पुत्र राजा अश्वपति हैं। यदि आप सभी अनुमत हों तो हम सभी उनके पास चलते हैं। राजा अश्वपति के पास समित्पाणि जाने से राजा उन्हें आत्मरूप वैश्वानर का विवेचन करते हैं। इसे हम वैदिक काल की सेमिनार भी कह सकते हैं।

५. कथा-माध्यम– उपनिषद्, ब्राह्मण ग्रन्थ वेदों के मन्त्रों के उपदेश ही हैं। कई बार गम्भीर विषयों को कथा के माध्यम से बताने पर सरलता से समझ आ जाते हैं। केनोपनिषद् में अग्नि, वायु, इन्द्र का गर्व प्रजापति ब्रह्म के सामने चूर होना, कठोपनिषद् की यम-नचिकेता कथा, बृहदारण्यक में याज्ञवल्क्य गार्गी-मैत्रेयी कथा, याज्ञवल्क्य का सर्वश्रेष्ठ ब्रह्मनिष्ठ होना, छान्दोग्योपनिषद् में आरुणि का श्वेतकेतु को तत्त्वमसि समझाना, प्रजापति का इन्द्र और विरोचन का आत्मा के स्वरूप को समझाना। इस प्रकार की कथाओं से ईश्वर और आत्मा के सिद्धान्त सरलता से बाल ब्रह्मचारी समझ सकते हैं।

६. शास्त्रार्थ– युवा और परिपक्व ब्रह्मचारियों, आचार्यों के मध्य शास्त्र के किसी एक सिद्धान्त पर 'एकमत' होने के लिये जो वार्तालाप होता है वह शास्त्रार्थ कहलाता है। हमारे देश में कभी भी शस्त्र से या जोर जबरदस्ती से किसी पर कोई सिद्धान्त लादा नहीं जाता था। 'शास्त्रार्थ' हमारे देश में एक स्वस्थ परम्परा थी जिसके माध्यम से हम सर्वश्रेष्ठ विचार तक पहुँचते थे। शास्त्रार्थ न केवल शिक्षा अपितु हमारे सामाजिक जीवन पर भी प्रभाव डालता था।

७. विद्वानों द्वारा यज्ञ व प्रवचन– यज्ञ, प्रवचन वैदिककाल की शिक्षा के महत्त्वपूर्ण स्तम्भ थे। यज्ञ और प्रवचन कोई आज की देन नहीं है। भवभूति के उत्तर रामचरित में राम की माताओं का अपने जामाता महर्षि ऋष्यशृङ्ग के यज्ञ को देखने उनके आश्रम में जाने का वर्णन मिलता है। राजा जनक का यज्ञ महर्षि याज्ञवल्क्य सर्वश्रेष्ठ ब्रह्मनिष्ठ होने के कारण करवाते हैं। युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में सर्वश्रेष्ठ वेदज्ञ होने कारण कृष्ण की पूजा होती है आदर होता है। इस तरह के यज्ञ और प्रवचन गुरुकुल में पढ़े हुए आचार्य ब्रह्मचारी ही तो करवाते थे। इस तरह के आयोजन गृहों में, नगरों में होते थे और यह भी नागरिकों को शिक्षित करने का एक बड़ा माध्यम था।

उपसंहार– पढ़नेवाला विद्यार्थी, छात्र, शिष्य या ब्रह्मचारी कहलाता था और आजकल भी 'ब्रह्मचारी' पद को छोड़कर सभी नाम प्रचलित हैं। ब्रह्मचारी "यो ब्रह्मणि चरति" जो 'ज्ञान' में ही विचरण करता रहता है और यदि ब्रह्म का अर्थ 'ईश्वर' करें तो जो ईश्वर या ईश्वरीय सृष्टि या पदार्थों की गवेषणा में लगा रहता है, वह ब्रह्मचारी है। इसी प्रकार जिज्ञासा और उसका समाधान प्रश्न और उत्तर शैक्षणिक विधि है, यह अनेक मन्त्रों में उपलब्ध है। इसी प्रकार युधिष्ठिर और यक्ष के प्रश्नोत्तर महाभारत में हैं। जो शिक्षण-विधियाँ प्राचीनकाल में थीं वो आज ज्यों कि त्यों हैं। आनन्द तो तब आता है कि स्मरण करने की विधियाँ, सीखने की विधियाँ विद्यार्थी ट्यूशन में सीखते हैं। सत्यार्थप्रकाश के चौथे समुल्लास का पहला मनुप्रोक्त श्लोक है– **"वेदानधीत्य वेदौ वा वेदं वापि यथाक्रमम्, अविप्लुत ब्रह्मचर्यो गृहस्थाश्रममाविशेत्।"** एक वेद, दो वेद, तीन वेद या चारों वेद पढ़कर बिना ब्रह्मचर्य खोये गृहस्थाश्रम में प्रवेश करे। यहाँ **"अविप्लुत ब्रह्मचर्य:"** का अर्थ एकमात्र शुक्रावरोध नहीं है अपितु जीवन भर पढ़ते रहना है, यह अर्थ भी है।

आर्यजगत् के समाचार

१. महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित गुरुकुल आश्रम जमानी, इटारसी, म.प्र. का वार्षिकोत्सव दि. १९, २०, २१ जनवरी २०१८ को मनाया जा रहा है। यह आश्रम अपने क्षेत्र में आर्यसमाज एवं वैदिक विचारधारा के प्रचार-प्रसार में सतत प्रयत्नशील है। आप सभी उत्सव में सादर आमन्त्रित हैं। **सम्पर्क- ९१३१९६९१७३**

२. बोधोत्सव - महर्षि दयानन्द का जन्म स्थान टंकारा में ऋषि बोधोत्सव का आयोजन १२ से १४ फरवरी २०१८ को किया जाएगा। उक्त समारोह में अधिक-से-अधिक आर्यजनों के साथ टंकारा पधारने का कार्यक्रम बनायें। आपके आवास (आने की पूर्व सूचना देने पर) एवं भोजन की व्यवस्था टंकारा ट्रस्ट की ओर से होगी। **सम्पर्क-** ०११-२४३३३०४०

३. वेद प्रचार- आर्यसमाज स्वामी दयानन्द मार्ग, अम्बाला छावनी का वेद प्रचार एवं वार्षिकोत्सव दि. ०९ से १२ नवम्बर २०१७ तक सहर्षोल्लास मनाया गया। कार्यक्रम श्रीमती विजय गुप्ता के प्रधानत्व में मनाया गया। अन्तर्विद्यालय भाषण प्रतियोगिता के अन्तर्गत 'वेद संदेश से विश्वशान्ति' विषय पर वाद-विवाद प्रतियोगिता तथा 'नारी का उत्तरदायित्व और आधुनिक समाज' विषय पर महिला सम्मेलन का आयोजन किया गया, जिसमें विभिन्न संस्थाओं से विशेष रूप से आमन्त्रित विदुषियों ने अपने-अपने विचार व्यक्त किये।

४. शिविर सम्पन्न- आर्ष महाविद्यालय यज्ञशाला गुरुकुल लाडवा, कुरुक्षेत्र में ०३ दिसम्बर २०१७ को ७०वें चरित्र निर्माण शिविर का आयोजन पूर्व जस्टिस प्रीतमपाल एवं श्रीमती माया प्रीतम के द्वारा किया गया, कार्यक्रम के मुख्य अतिथि पूर्व जस्टिस वीरेन्द्रसिंह थे। यज्ञ आचार्य कृष्णदेव शास्त्री एवं गुरुकुल के ब्रह्मचारियों द्वारा किया गया।

५. वार्षिकोत्सव- आर्यसमाज कुण्डा, प्रतापगढ़, उ.प्र. का वार्षिकोत्सव दि. ३ से ६ नवम्बर २०१७ तक मनाया गया। आचार्य आर्य नरेश-हिमाचल प्रदेश, पं. ओमप्रकाश शास्त्री-हरियाणा, श्री सत्यप्रकाश वानप्रस्थी, श्री घनश्याम प्रेमी व श्री भूपेन्द्र आर्य आदि ने विभिन्न विषयों पर वैदिक विचारधारा प्रवाहित की।

६. जन्मदिवस मनाया- आर्यजगत् एवं संस्कृत जगत् के अन्तर्राष्ट्रीय विद्वान् स्व. पद्मश्री डॉ. कपिलदेव द्विवेदी के जन्मदिवस पर संस्कृत विद्वानों को विश्वभारती अनुसंधान परिषद् ज्ञानपुर द्वारा डॉ. कपिलदेव द्विवेदी स्मृति विश्वभारती सम्मान डॉ. गयाराम पाण्डेय-वाराणसी, डॉ. विद्याशंकर त्रिपाठी को प्रदान किया गया। कार्यक्रम की अध्यक्षता डॉ. प्रभुनाथ द्विवेदी ने की, आरम्भ श्री अनिल मिश्र के वैदिक मंगलाचरण से हुआ। श्री प्रणवदेव ने कपिलाष्टक प्रस्तुत किया व संचालन डॉ. भारतेन्दु द्विवेदी ने किया।

७. वेद-प्रचार व विभिन्न कार्यक्रम- जिला आर्य उप प्रतिनिधि सभा भीलवाड़ा के द्वारा वेद प्रचार एवं सत्संग का कार्यक्रम आर्य भजनोपदेशक श्री कुँवर भूपेन्द्रसिंह एवं श्री लेखराज शर्मा के द्वारा दि. १९ से २१ नवम्बर २०१७ तक बनेड़ा तहसील में तथा आर्य उपप्रतिनिधि सभा के संरक्षक श्री गणपतलाल आर्य के तत्वावधान में रायला ग्राम नवग्रह आश्रम एवं राजकीय बालक/बालिका विद्यालय में वेद प्रचार एवं छात्रों के चरित्र निर्माण सम्बन्धी प्रवचन एवं यज्ञ का आयोजन सम्पन्न हुआ। दि. २३ से २६ नवम्बर २०१७ तक जिला मन्त्री राधेश्याम अग्रवाल, आर्यसमाज शाहपुरा के प्रधान श्री कन्हैयालाल, चन्द्रप्रकाश झँवर एवं सभी सदस्यों के सहयोग के द्वारा कार्यक्रम रखा गया। दि. २४ नवम्बर को स्वामी विवेकानन्द मॉडल विद्यालय शाहपुरा में भी वेद प्रचार कार्यक्रम किया गया। दि. २६ नवम्बर को आर्यसमाज भवन में साप्ताहिक अधिवेशन में यज्ञ व संगीत का आयोजन किया गया। दि. ०३ दिसम्बर २०१७ को श्री महावीर के पुत्र के पुनर्विवाह पर यज्ञ का आयोजन आर्यसमाज भीलवाड़ा के पं. शिव कुमार शास्त्री व कोषाध्यक्ष छाता जी के द्वारा किया गया। दि. ०५ दिसम्बर को सन्तोषसिंह चौधरी के ८५वें जन्मदिवस के उपलक्ष्य में यज्ञ का आयोजन किया गया।

८. यज्ञ सम्पन्न- महिला आर्यसमाज मानसरोवर, जयपुर, राज. ने चार दिवसीय अथर्ववेद पारायण यज्ञ के साथ २३वाँ वार्षिक उत्सव मनाया, पूर्णाहुति २६ नवम्बर २०१७ को हुई। यज्ञ के ब्रह्मा पं. देशराज सत्येक्षु-भरतपुर तथ वेदपाठी श्रीमती स्मृति आर्या-दिल्ली व श्रीमती श्रुति-जयपुर रहे। भजनोपदेशक नरदेव बेनीवाल ने स्वर-माधुर्य बिखेरा।

वैवाहिक

९. वर चाहिये- आर्य परिवार, संस्कारित, आयु- २५ वर्ष, कद- ५ फुट ३ इंच., शिक्षा- बी.ए.एम.एस., एम.डी. (आयुर्वेद), अध्ययनरत, गौर वर्ण युवती हेतु आर्यसमाजी परिवार का समकक्ष संस्कारित युवक चाहिए। **सम्पर्क- ०९४१८७३५२५३** **ई-मेल-** chaudhari.arya1992@gmail.com

चुनाव समाचार

१०. आर्यसमाज शृंगार नगर, लखनऊ, उ.प्र. के चुनाव में **प्रधान-** आचार्य रूपचन्द्र दीपक, **मन्त्री-** श्री राकेश माहना, **कोषाध्यक्ष-** श्रीमती आशा मेहता को चुना गया।